संरक्षक सदस्य

श्रीमहन्त पू. स्वामी हरिहरानन्द सरस्वती, श्रीमहन्त विद्यानंद सरस्वती, स्वामी रविन्द्रानन्द सरस्वती, स्वामी देवानन्द सरस्वती, श्री प्रवीन अग्रवाल, श्री अनिल चौधरी, श्री बी.एन. तिवारी, डॉ. संजय सिन्हा, श्री नरेन्द्र सोमानी, श्री आर.के. सिंह, श्री प्रशान्त सोमानी, श्री राजेन्द्र सिंह, श्री शशिधर सिंह, श्री ब्रजकिशोर सिंह, डॉ. संजय पासवान (पूर्व केन्द्रीय मंत्री), स्वामी विवेकानन्द,

प्रधान सम्पादक/संस्थापक

महामंडलेश्वर

डॉ. स्वामी उमाकान्तानन्द सरस्वती जी महाराज

प्रबन्ध सम्पादक - प्रो. वीरेन्द्र अग्रवाल

कार्यकारी सम्पादक - **श्री प्रेमशंकर ओझा**

सम्पादक मण्डल - शत्रुघ्न प्रसाद, बालकृष्ण शास्त्री, श्रीमती राखी सिंह, अभिजीत तुपदाले, डॉ. दीपक कुमार, डॉ. हरेश प्रताप सिंह, श्री कुलदीप श्रीवास्तव, डॉ. सुखेन्दु कुमार, दिनेशचन्द्र शर्मा

आवरण सज्जा - आनन्द शुक्ला

व्यवस्था मण्डल - श्री वीरेन्द्र सोमानी, श्री संजय अग्रवाल, राजेन्द्र प्र. अग्रवाल (मथुरा वाले), श्री सुभाषचन्द्र त्यागी, श्री गोपाल सचदेव, श्री रविशरण सिंह चौहान, श्री महेन्द्र सिंह वर्मा, श्री राजनारायण सिंह, श्री अश्विनी शर्मा, श्री सुरेश रामबर्ण (मॉरीशस)

वित्तीय सलाहकार - श्री वेगराज सिंह

विधि सलाहकार - श्री अशोक चौबे

परामर्श एवं सहयोग-श्री राजेन्द्र अग्रवाल, श्री श्यामबाबू गुप्ता, श्री शिलेश्वर मानिकतला, श्री नरेन्द्र वाशनिक (निक्की), श्रीमती नैना बेनबीड़ीवाला

विज्ञापन व्यवस्था - श्री दयाशंकर वर्मा

प्रमुख संवाददाता - श्री मोहन सिंह

(प्रकाशन में लगे सभी व्यक्ति अवैतनिक है)

मूल्य - 25/-

वार्षिक चन्दा - 300/-

आजीवन - 5000/-

दिल्ली सम्पर्क सूत्र : 305-308, **प्लाट नं.** 9, **विकास सूर्या गैलेक्सी, सेक्टर-**4, **सेन्ट्रल मार्केट, द्वारका, नई दिल्ली-**110075

मोबाईल +91-8010188188

सम्पर्क सूत्र :

महामंडलेश्वर डॉ. स्वामी उमाकान्तानन्द सरस्वती जी महाराज

आदर्श आयुर्वेदिक फार्मेसी, कनखल, हरिद्वार (उत्तराखंड)

फोन- 01334-2626 00, मोबाइल-09897034165

E-mail: Umakantmaharaj@hotmail.com, swamiumakantanand@gmail.com

शाश्वत ज्योति

शाश्वत दर्पण

- **अर्न्तमन से** ❑ म.म. स्वामी उमाकान्तानन्द सरस्वती जी महाराज 2
- शिव कथा- **अविरल अमृत प्रवाह** ❑ म.म.स्वामी जी महाराज 3
- गीता काव्य- **गीता महिमा** ❑ माधव पाण्डेय निर्मल 8
- इतिहास-संस्कृति-**सूत्र साहित्य का संक्षिप्त परिचय** ❑ डॉ. देवेन्द्र गुप्ता 9
- परिवार एवं समाज-**कैसे बनाएं एक आदर्श संयुक्त परिवार** ❑ वीरेन्द्र अग्रवाल 13
- आयुर्वेद-**चमत्कारिक रामबाण औषधियाँ** ❑ दीपक वैद्य 15
- प्रेरक प्रसंग-**जीवन की सफलता का रहस्य** ❑ म.म. डॉ. उमाकान्तानन्द सरस्वती जी महाराज 17
- आलस्य प्रमाद-**हमारा महान शत्रु-आलस्य** ❑ अशोक गुप्ता 18
- आस्था-विश्वास-**अहंकार आने पर दुख आता है** ❑ अनिल वर्मा 20
- मानवी जीवन का अर्थ-**आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महारिपुः** ❑ म.म.स्वामी उमाकान्तानन्द जी महाराज 21
- धार्मिक मान्यता-**देवताओं को फूल चढ़ाने से दूर होती है** ❑ निर्मल पाण्डेय 26
- ज्योतिष शास्त्र-**पसंदीदा फल बताते हैं आपका व्यक्तित्व** ❑ कौशल पाण्डेय (ज्योतिष) ... 27
- इतिहास गाथा-**भगिनी निवेदिता भारत के उत्थान कार्य.....** ❑ म.मं. उमाकान्तानन्द जी महाराज 29
- आस्था जानकारी-जीव हत्या के बावजूद मृग, ब्याघ्र, सिंह चर्म ग्राह्य क्यों ? ❑ कौशल पाण्डेय 31
- रोचक जानकारी-**हिटलर की इन बातों की रोचक जानकारी** ❑ साभार 32
- सामाजिक आह्वान-**घर बचाओ, देश बचाओ** ❑ मीनाक्षी यादव 33
- आंतरिक संतुलन-**रोते क्यों हो ?** ❑ म.म. उमाकान्तमनन्द सरस्वती जी महाराज 34
- सामाजिक उत्थान-**भाव संवेदना का विकास करना ही साधुता है** ❑ अनिल त्रिपाठी 35
- प्रेरक प्रसंग-**''समय'' और ''धैर्य'' ये दोनों ही सच्चे हीरे-मोती हैं** ❑ राजेश चौबे 37
- अंर्तदृष्टि-**दोष-दृष्टि को सुधारना ही चाहिए** ❑ अनिल त्रिपाठी 38
- **प्रमाणिक-सात पौराणिक पात्र जो आज भी है जीवित** ❑ अन्विता अग्रवाल 41
- ऋषि चिन्तन-**अगर आपको भी भगवान से शिकायत है तो जानें** 42
- ऐतिहासिक गाथा-**भारत के साथ हमेशा से धोखा दर धोखा** ❑ साभार 43
- आत्म चिन्तन-**आत्मोन्नति के चार द्वार** ❑ मनोहरलाल 44
- काव्य-**दण्डकारण्य** ❑ डॉ. रामसनेही लाल शर्मा 47
- **व्रत त्यौहार** 48

स्वामित्व-डिवाइन श्रीराम इण्टरनेशनल चैरिटेबल ट्रस्ट (रजि.) के लिए मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक- डॉ. स्वामी उमाकान्तानन्द सरस्वती द्वारा माँ गायत्री ऑफसेट प्रिन्टर्स, आर्यनगर, ज्वालापुर, हरिद्वार (उत्तराखंड) से मुद्रित तथा आदर्श आयुर्वेद फार्मेसी कनखल, हरिद्वार से प्रकाशित। साज सज्जाः स्वामिनारायण प्रिंटर्स, फोन- 09560229526, 011-45076240

अंतर्मन से.....

आत्मीय पाठकों/भक्तों,

राम राम जय राजा राम। राम राम जय सीता राम। ''राम'' शब्द सुनते ही मन को परम शांति मिलती है। राम नाम अपने आप में भगवान के सहस्त्रनामों के समतुल्य है। हमारे राम ब्रह्म हैं, परमात्मा हैं, अवतार है। हर हिन्दू धर्म में जन्में मनुष्य के लिये उनके प्राण धन हैं। भारतीय संस्कृति मूलाधार और संस्कृति के एकमात्र मर्यादापुरुषोत्तम हैं। वेदों के पश्चात् हिन्दुस्तान का हजारों वर्षों का इतिहास भगवान श्रीराम के बिना कुछ भी नहीं है।

सैकड़ों वर्षों तक मुगल आक्रांताओं और लुटेरों को इस देश ने झेला। हजारों हजार माताओं और बहनों ने अपने आप को अग्नि के हवाले कर दिया। बड़े पैमाने पर धर्मान्तरण किया गया। मन्दिर तोड़े गये। उसके स्थान पर मस्जिद बनाये गये। बहुत बड़ा सांस्कृतिक सामाजिक असंतुलन हुआ। उसके पश्चात् वर्षों अंग्रेजों की दासता भारतमाता को झेलनी पड़ी। क्रांतिकारियों के बलिदान तथा लाखों देशवासियों के त्याग से देश आजाद हुआ। 12वीं शताब्दी से पूर्व एक भी मुस्लिम समुदाय को मानने वाला अनुयायी इस देश में नहीं था। आज लगभग 18 करोड़ पाकिस्तान में और 20 करोड़ से अधिक हिन्दुस्तान में हैं। यहाँ हमारे कहने का मतलब यह नहीं की इनकी जनसंख्या क्यों बढ़ी अथवा ये कहाँ से आये? इतिहास समझने वाले इस तथ्य को भलीभाँति जानते हैं। हिन्दुस्तान या पाकिस्तान के लगभग सभी मुसलमान हिन्दू थे। धर्मान्तरण करके उन्हें मुसलमान बनाया गया।

चर्चा यहाँ की जा रही थी कि वर्षो तक हम अंग्रेजों और मुगलों के गुलाम रहे फिर आजादी मिली। भौगोलिक दृष्टि से आजादी मिल गई। परन्तु बहुत लोगों को मानसिक गुलामी से आजाद नहीं कराया जा सका। कुछ तो कम्युनिस्ट और मार्क्स का भी प्रभाव पड़ा। कुछ इतिहासकारों की गुलामी की मानसिकता ने हमारे इतिहास को तोड़-मरोड़ कर रख दिया। विदेशी आक्रांताओं को हीरो की तरह प्रस्तुत किया और हमारे श्रेष्ठ पुरुषों और बलिदानियों का अपमान किया। हीन भावना और विकृत मानसिकता यहाँ तक पहुँच गई कि हमारे आराध्य, मर्यादापुरुषोत्तम भगवान राम के अस्तित्व पर ही सवाल उठा दिया। हम सब यह सुन भी रहे, यह भी बहुत बड़े दुख की बात है। भारत का कण-कण राम है और इस भूमि का हर वो क्षेत्र जहाँ-जहाँ चरण पड़े भगवान राम के वे सारे स्थान चीख-चीख कर भगवान राम के अस्तित्व का प्रमाण दे रहे हैं। इन अन्धों को दखाई नहीं दे रहा। इन लोगों ने पहले देश बेचा अब धर्म और संस्कृति बेचने पर तुले हुए हैं।

ये कितने बड़े दुख की बात है कि लगभग 90 करोड़ हिन्दुओं वाले इस देश में भगवान राम को अपने ही जन्मभूमि में अपने रहने का एक घर नहीं मिल रहा। सेक्यूलरिज्म के नाम पर भयंकर राजनीति खेली जा रही है। मजेदार बात यह है कि यदि सेक्यूलरिज्म अपनाना है तो सभी सम्प्रदाय के अनुयायियों को समान रूप से अपनाना चाहिये। परन्तु, ये सारे नियम हिन्दुओं के लिये ही क्यों? दूसरे सम्प्रदायों के लिये तुरन्त उनके पर्सनल लॉ सामने आ जाते हैं। धर्म खतरे में पड़ जाता है। कुछ तथाकथित सेक्युलर हिन्दू भी यह कहते सुने जाते हैं कि अरे आपस में लड़ने से क्या फायदा एक मन्दिर से क्या होगा? इतने तो भगवान राम के मन्दिर हैं देश में। सच्चाई यह है कि लड़ कौन रहा है? हम किसी दूसरे के देश में लड़ने आये हैं? ये देश भगवान राम का है और अयोध्या उनकी जन्मभूमि है। जन्मभूमि पर उनका मंदिर होना ही चाहिये।

अब इलाहाबाद हाई कोर्ट ने यह निर्णय दे दिया कि वहाँ भगवान राम का मंदिर था। उसे तोड़ कर बाबरी ढांचा बनाया गया है तो मुकद्मा सुप्रीम कोर्ट पहुँचा। वहाँ निर्णय यह हुआ कि आप लोग आपस में सुलझा लीजिये। जब सुलझाने की कोशिश हुई तो तथाकथित सेक्युलर लोगों को मंजूर नहीं। कहते हैं यह आस्था का मामला नहीं ये तो कानूनी मामला है। मुस्लिम का या अन्य सम्प्रदाय का मामला हो तो वो आस्था का मामला होता है केवल हिन्दू की आस्था इस देश में आस्था कुछ नहीं होती। आखिर ऐसा क्या हो गया कि अपने ही देश में इतनी बड़ी जनसंख्या होने के बावजूद भी हमारी आस्था इनकी नजरों में आस्था नहीं है। कारण हम स्वयं है- हमारा बिखराव अलग-अलग जातियों में और हमारी नुपंसकता, कायरता।

राम जन्म भूमि पर मन्दिर के खिलाफ न जाने कितने मुस्लिम भाई है पता नहीं जबकि बहुत बड़ी मुस्लिम जनसंख्या राम मन्दिर बनाने के पक्ष में है। तकलीफ तो आस्तीन के साँपों से होती है जो हिन्दू होते हुए भी मन्दिर बनने के खिलाफ वकालत करते और सुनवाई न हो सके तारीख और आगे बढ़ जाए इसकी अर्जी सुप्रीम कोर्ट में लगाते हैं।

अब समय आ गया हैं कि हम अपनी शक्ति दुनियाँ को दिखायें कि हम 90 करोड़ सब एक है, भगवान राम हमारे आराध्य है। शीघ्र ही रामजन्म भूमि पर भव्य मंदिर का निर्माण हो।

स्वामी उमाकान्तानन्द सरस्वती

(स्वामी उमाकान्तानन्द सरस्वती)

शिव कथा-

अविरल अमृत प्रवाह

-महामंडलेश्वर डॉ. स्वामी उमाकान्तानन्द सरस्वती जी महाराज

गतांक से आगे

पार्वती-जटिल सम्वाद

ब्रह्माजी बोले-हे नारद! फिर परीक्षा के बहाने भगवान् शंकर स्वयं ही पार्वतीजी को देखने गये। जटाजूटधारी शंकर अत्यन्त वृद्ध ब्राह्मण का रूप धारण कर दण्ड तथा छत्र ले शीघ्र ही प्रस्थान किया। वहाँ जाकर देखा तो सखियों से घिरी पार्वती एक पवित्र वेदी पर साक्षात् चन्द्रमा की कला के समान विराजमान हैं। तब एक ब्रह्मचारी का वेष धारण कर भक्तवत्सल भगवान् उनको देखते हुए पास चले गये। तब एक ऐसे अद्भुत और तेजस्वी ब्राह्मण को अपने निकट आया देखकर देवी ने पूजन-सामग्री उठा उनकी पूजा की और आदर सहित यह पूछा कि हे वेद-विदाम्बर! आप कौन हैं और कहाँ से आये हैं? तब ब्राह्मण ने कहा-मैं दूसरों का उपकार करनेवाला एक तपस्वी वृद्ध ब्राह्मण हूँ। तुम कौन हो, किसकी कन्या हो और किसलिए इस विजन वन में ऐसा घोर तप कर रही हो, जो मुनियों को भी दुर्लभ है? तुम्हारे पिता का क्या नाम है? सौभाग्यवती हो, फिर तप की क्या आवश्यकता है? तुम वेद से उत्पन्न सावित्री हो अथवा लक्ष्मी, इसमें कौन हो? मैं तर्क नहीं कर सकता।

एक ब्रह्मचारी का वेष धारण कर भक्तवत्सल भगवान् उनको देखते हुए पास चले गये। तब एक ऐसे अद्भुत और तेजस्वी ब्राह्मण को अपने निकट आया देखकर देवी ने पूजन-सामग्री उठा उनकी पूजा की।

इस पर पार्वती ने कहा-हे विप्र! न तो मैं वेदप्रसू सावित्री हूँ, न लक्ष्मी। मैं हिमाचल-पुत्री हूँ। पहले मैं सती नाम से दक्ष के घर उत्पन्न हुई थी। परन्तु वहाँ जब मेरे पिता ने मेरे पति की निन्दा की तो मैंने योग से अपना शरीर त्याग दिया। इस जन्म में भी मैंने शिव को प्राप्त कर लिया था। परन्तु दैवयोग से वह मुझे त्यागकर कामदेव को भस्म करके चले गये हैं, जिससे मैं उद्विग्न होकर यहाँ स्वर्ग की सीता के तट पर तप करने चली आई हूँ। परन्तु बहुत दिनों तक कठोर तप करने के पश्चात् भी मैं अपने प्राणवल्लभ को न प्राप्त कर सकी। अब इस समय मैं फिर अग्नि में प्रवेश करना चाहती थी तो आप आ गये जिससे थोड़ी देर के लिए ठहर गई हूँ। अब आप जाइये। मुझे शिवजी ने स्वीकार नहीं किया है, इससे अब मैं अग्नि में प्रवेश करूँगी और जहाँ-जहाँ जन्म धारण करूँगी, वहाँ-वहाँ शिव को ही वरूँगी।

ऐसा कहकर उस ब्राह्मण के बार-बार मना करने पर भी पार्वती अग्नि में प्रवेश कर गईं। परन्तु पार्वती के तप से अग्नि तत्क्षण शीतल हो गई। पार्वती क्षणभर अग्नि में स्थित रहीं और पुनः स्वर्ग को गमन करने लगीं तब उस ब्राह्मण ने पूछा कि हे भद्रे! तुम्हारा यह क्या तप है, कुछ जान नहीं पड़ता? न तो अग्नि ने ही तुझे जलाया और न तुम्हारा मनोरथ ही पूर्ण हुआ। तुम मुझ ब्राह्मण से अपना मनोरथ तो कहो? मैं पूछता हूँ कि तुम क्या वर चाहती हो? सम्पूर्ण फल तो तुम्हारे निकट उपस्थित है। यदि तुम दूसरे के निमित्त तप करती हो तो करो। इससे क्या होगा, जो रत्न को छोड़ काँच को संचित करती हो? ऐसा अनुपम सौन्दर्य तुमने व्यर्थ कर दिया। अनेकों प्रकार के वस्त्रों को त्यागकर यह चर्मादि धारण कर लिया। फिर भी तुम अपने इस तप का कारण तो कहो जिससे मुझ ब्राह्मण को तो प्रसन्नता प्राप्त हो। ब्रह्माजी कहते हैं कि ब्राह्मण के इस प्रकार पूछने पर अम्बिका ने अपनी प्रिय सखी सुव्रता को प्रेरित किया तो उसने ब्राह्मण रूपधारी शंकरजी को पार्वती के तप का सब अभिप्राय कह सुनाया। उसे सुन जटाधारी रुद्र हँसने लगे और विजया से न कहकर वे जटिल रुद्र पार्वती से बोले-यह सखी जो कहती है वह तो परिहास-सा ज्ञात होता है। यदि यथार्थ है तो हे पार्वती! तुम स्वयं अपने मुख से मुझसे कहो। तब देवी पार्वती स्वयं ही उस ब्राह्मण से बोलीं।

(शिव-पार्वती सम्वाद)

इस प्रकार सुनकर श्रीपार्वती बोलीं-हे ब्राह्मण देवता! मैं मन कर्म और वाणी द्वारा ही भगवान् शंकर को पति बनाने का निश्चय कर चुकी हूँ। मैं जानती हूँ यह कठिन है। फिर भी मेरा उत्साह भंग नहीं हुआ। अभी तक तप करने में मेरा मन जुड़ा रहा। इतना सुनकर ब्राह्मण बोले-हे देवीजी! तुम श्रीमहादेवजी को चाहती हो, उन्हें गुरु कृपा द्वारा मैं भली प्रकार जानता हूँ। वे बैल पर चढ़ने वाले वृषभध्वज हैं। भस्म जटाधारी हैं। भूत-पिशाचों के मध्य रहते हैं। इस प्रकार

से महादेवजी को न मालूम क्यों तुम अपना पति बनाना चाहती हो? कुछ विचार भी किया है कि नहीं। न मालूम तुम्हारी समझ कहाँ चली गई? इससे प्रथम दक्ष कन्या ने भी प्रारब्ध वश शिव को ही पति बनाया था। उसके पिता दक्ष इससे चिढ़ गये थे। अपने यज्ञ में इसी कारण न अपनी कन्या को और न कन्या के पति को बुलाया। तब तो सती क्रोध में आ गई, उधर पति ने भी त्याग दिया था। तब तो सती ने योगाग्नि द्वारा अपने शरीर को जला दिया। भला उसे कौन-सा सुख मिला? हे पार्वती! तुम भूल रही हो। तुम तो सुन्दरी हो, तुम्हें तो चाहिए कि इन्द्र, विष्णु आदि किसी भी रूप तथा गुणवान को चुन लो। यदि आप सोना, चाँदी आदि रत्न चाहें तो उनके पास कहाँ? वस्त्र तक उनके पास नहीं। इसलिए वे स्वयं दिगम्बर रहते हैं। चढ़ने के लिए उनके पास केवल एक बूढ़ा बैल है, और क्या? वर के योग्य कोई भी उनमें गुण नहीं।

(पार्वती को शिव-दर्शन)

श्रीपार्वतीजी बोलीं-हे विप्रवर! इस प्रकार के शिव के दोष कहकर तो पहिले सप्तऋषि भी यहाँ से थक कर चले गये हैं। अब तुम भी सुना रहे हो। जिस शंकर ने विष्णु को अपनी श्वासों के द्वारा ही वेद पढ़ा दिये, उनके समान विद्वान ही कौन हो सकता है? जो चराचर जगत् के पिता हैं, उनकी आयु का आपको अनुमान ही कैसे हो? उनके भक्तजन मृत्यु को जीत लेते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र आदि सभी देवता इन्हीं की रक्षा द्वारा

उस ब्राह्मण के बार-बार मना करने पर भी पार्वती अग्नि में प्रवेश कर गईं। परन्तु पार्वती के तप से अग्नि तत्क्षण शीतल हो गई। पार्वती क्षणभर अग्नि में स्थित रहीं और पुनः स्वर्ग को गमन करने लगीं तब उस ब्राह्मण ने पूछा कि हे भद्रे! तुम्हारा यह क्या तप है, कुछ जान नहीं पड़ता? उस ब्राह्मण के बार-बार मना करने पर भी पार्वती अग्नि में प्रवेश कर गईं। परन्तु पार्वती के तप से अग्नि तत्क्षण शीतल हो गई। पार्वती क्षणभर अग्नि में स्थित रहीं और पुनः स्वर्ग को गमन करने लगीं ।

अपने लोकों में सुख पा रहे हैं। आठों सिद्धियाँ सब समय इनके चरणों में सिर झुकाकर खड़ी रहती हैं। शिव महिमा कही भी नहीं जा सकती। सर्व समर्थ शिव की निन्दा करनेवालों को तो कहीं भी स्थान नहीं मिलता। उनके सब पुण्य नष्ट हो जाते हैं। अतएव आपको शिवनिन्दा नहीं करनी चाहिए। अब तो मैं आपकी पूजा कर चुकी हूँ, अत: इस अपराध को क्षमा कर देती हूँ। आगे भूलकर भी निन्दा न करना।

ब्रह्माजी बोले-हे नारदजी! श्रीपार्वतीजी ऐसा कहकर चुप हो गईं और श्रीमहादेवजी के ध्यान में लग गईं। तब विप्र वेषधारी भगवान् शंकर ने कुछ कहना चाहा तब तो क्रोधावेश में आकर पार्वतीजी ने अपनी सखी विजया से कहा-इस नीच ब्राह्मण को यहाँ से शीघ्र निकाल दो। यह शिवनिन्दा फिर से करने लग जायेगा। शिवनिन्दा सुनने वाले भी पाप के भागी होते हैं। शिव निन्दक तो मार देने योग्य हैं। यदि शिव निन्दक ब्राह्मण हो तो उसे त्याग देना चाहिए। यदि ऐसा न हो सके तो उस स्थान को शिवभक्त स्वयं त्याग दे। अत: हम ही इस स्थान को छोड़कर के दूसरे स्थान पर चली जाती हैं।

ब्रह्माजी बोले-हे नारदजी! इतना कहकर श्रीपार्वतीजी वहाँ से चलने लगीं। तब तो परम कृपालु सदाशिव अपने ही रूप में आ गये और बोले-हे पार्वतीजी! तुम कहाँ चली हो? मैंने तो तुम्हें त्यागा नहीं है, अब तुम्हीं मुझे त्याग रही हो। मैं तो तुम पर अतीव प्रसन्न हूँ, वर माँगो। तुमने तो तपोबल एवं भक्ति द्वारा मुझे अपने अधीन कर लिया है। हे प्राणेश्वरी! तुम तो अनादिकाल से ही मेरी पत्नी हो। अब लज्जा किस बात की? मैंने तुम्हारी अनेकों प्रकार से परीक्षाएं की हैं। तुम्हारे समान तो त्रिलोकी भर में भी कोई तपस्या करनेवाला नहीं। मैं तुम्हारे ही वश में हूँ। भगवान् शंकर के वचन सुनकर पार्वतीजी अतीव प्रसन्न हुईं।

(शिव-पार्वती संवाद)

नारदजी बोले-हे ब्रह्माजी! इसके आगे

ब्रह्माजी बोले-हे नारदजी! इतना कहकर श्रीपार्वतीजी वहाँ से चलने लगीं। तब तो परम कृपालु सदाशिव अपने ही रूप में आ गये और बोले-हे पार्वतीजी! तुम कहाँ चली हो? मैंने तो तुम्हें त्यागा नहीं है, अब तुम्हीं मुझे त्याग रही हो। मैं तो तुम पर अतीव प्रसन्न हूँ, वर माँगो।

क्या हुआ, पार्वतीजी के उस यश का वर्णन कीजिये। उसे सुनने की बड़ी इच्छा है। ब्रह्माजी बोले-हे द्विज! जब परमात्मा शिव ने ऐसा कहा तब उनके वचनों को सुन और आनन्ददायक स्वरूप को देखकर पार्वतीजी अत्यन्त प्रसन्न हुईं और अपने पास में बैठे हुए शिवजी को विस्फरित नेत्रों से देखती हुई शंकर से प्रेमपूर्वक बोलीं-हे देवेश! आप मेरे स्वामी हैं। क्या आपने जिस हठ से दक्ष का यज्ञ विध्वंस किया था, वह बात भुला दी है? हे देव-देवेश! आप वही हैं और मैं भी वही हूँ। अब देवताओं की कार्य-सिद्धि के लिए जो कि तारकासुर से दु:खित है, मैं मैना में उत्पन्न हुई हूँ। हे महेशान! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं, दयालु हैं, तो मेरा यह वचन पूर्ण कीजिये कि आप मेरे पति हों। अब मैं आपकी आज्ञा से पिता के घर जाती हूँ। वहाँ से आपका विशुद्ध यश प्रसिद्ध किया जाएगा। हे नाथ! उसके लिए आप मेरे पिता हिमाचल के पास जाइए और आप तो लीला-विशारद हैं, इसलिए भिक्षु होकर मेरे पिता से मुझे माँग लीजिये। संसार में अपने यश की प्रसिद्धि के लिए आप ऐसा ही कीजिये, जिसमें मेरे पिता का गृहस्थ कर्म तो सुफल हो। मेरे पिता आपके वाक्यों को अवश्य सुफल करेंगे। पहले जब मैं दक्ष के यहाँ पैदा हुई थी तब मेरे पिता ने शास्त्रोक्त विधि से आपको कन्यादान नहीं दिया था। उन्होंने ग्रहों का पूजन नहीं किया था, जिससे यह विवाह सछिद्र ही रहा। हे महादेवजी! अब देवताओं के कार्य के लिए आप मेरा शुद्ध रीति से विवाह कीजिये जिससे मेरे पिता को भी ज्ञात हो जाए कि मेरी पुत्री ने अच्छी तपस्या की है। ब्रह्माजी कहते हैं कि पार्वतीजी के इन वाक्यों को सुनकर शिवजी प्रसन्न हो गिरिजा से बोले कि हे महाशक्ति! मैं भी यही चाहता हूँ कि अब यथोचित मांगलिक कार्य होए। यद्यपि मैं सर्वथा ही स्वतन्त्र हूँ तथापि तुमने मुझे परतन्त्र कर दिया है। क्योंकि सब कुछ करनेवाली महामाया प्रकृति तुम्हीं हो।

तुमने ही इस सारे जगत् को मायामय किया है। मैंने और तुमने तो गुण और कार्य के भेद से संसार का प्रादुर्भाव किया है। परन्तु हे शैलजे! मैं हिमाचल न जाऊँगा और न भिक्षुक होकर तुम्हारे पिता से तुम्हारी याचना ही करूँगा। क्योंकि याचना करने से तो कैसा भी महापुरुष क्यों न हो, लघु हो जाता है। ऐसी स्थिति में तुम्हीं कहो कि मैं क्या करूँ?

तब शंकर को प्रणाम कर पार्वतीजी इस प्रकार भक्तिपूर्वक बोलीं कि हे शंकरजी! आपको मेरा वाक्य प्रयत्नपूर्वक करना चाहिए। आप मुझे मेरे पिता से माँगकर मुझे सौभाग्य दीजिये। मैं आपकी भक्त हूँ और जन्म-जन्म में आपकी पत्नी हूँ, इसलिए आप मुझ पर इतनी तो अवश्य ही कृपा कीजिये। अधिक क्या कहूँ? हे सर्वज्ञ! मैं आपके प्रभाव को जानती हूँ। मेरे लिए आप यह अद्‌भुत लीला कीजिये और लोक में अपना ऐसा यश विस्तृत कीजिये जिसे जानकर संसारीजन शीघ्र ही संसार-सागर से पार हो जायें। हे नारद! इस प्रकार कहकर पार्वतीजी बार-बार शंकरजी को प्रणाम कर कंधा झुका हाथ जोड़ चुप हो गईं। पार्वतीजी के ऐसा कहने पर शंकरजी ने उस संसार-विडम्बन कार्य को हँसते हुए स्वीकार किया और अन्तर्धान हो कैलाश की ओर चले गये। कैलाश पर सारा वृत्तान्त नन्दीश्वर से कहा। भैरवादिक उस वृत्तान्त को सुन आनन्द मनाने लगे। भगवान् शंकर भी अत्यन्त प्रसन्न हो गये।

(शिवजी द्वारा पार्वती-याचना)

ब्रह्माजी बोले-हे नारदजी! उसके बाद सफलता पाकर श्रीपार्वतीजी अपने माता-पिता के घर को चल पड़ीं। अब तो हिमाचल और मैना श्रीपार्वतीजी का आगमन सुनकर अपने पुरोहित, सम्बन्धी, मित्र आदिकों को साथ लेकर विमान पर चढ़कर नगर के बाहर श्रीपार्वतीजी के दर्शन करने के लिए आये और जय-जयकार करने लगे। राजमार्ग में स्त्रियाँ मंगल कलश लेकर नाचने लगीं। सौभाग्यवती नारियाँ हाथों में दीपक सजाकर

ब्रह्माजी बोले-हे नारदजी! उसके बाद सफलता पाकर श्रीपार्वतीजी अपने माता-पिता के घर को चल पड़ीं। अब तो हिमाचल और मैना श्रीपार्वतीजी का आगमन सुनकर अपने पुरोहित, सम्बन्धी, मित्र आदिकों को साथ लेकर विमान पर चढ़कर नगर के बाहर श्रीपार्वतीजी के दर्शन करने के लिए आये और जय-जयकार करने लगे। राजमार्ग में स्त्रियाँ मंगल कलश लेकर नाचने लगीं।

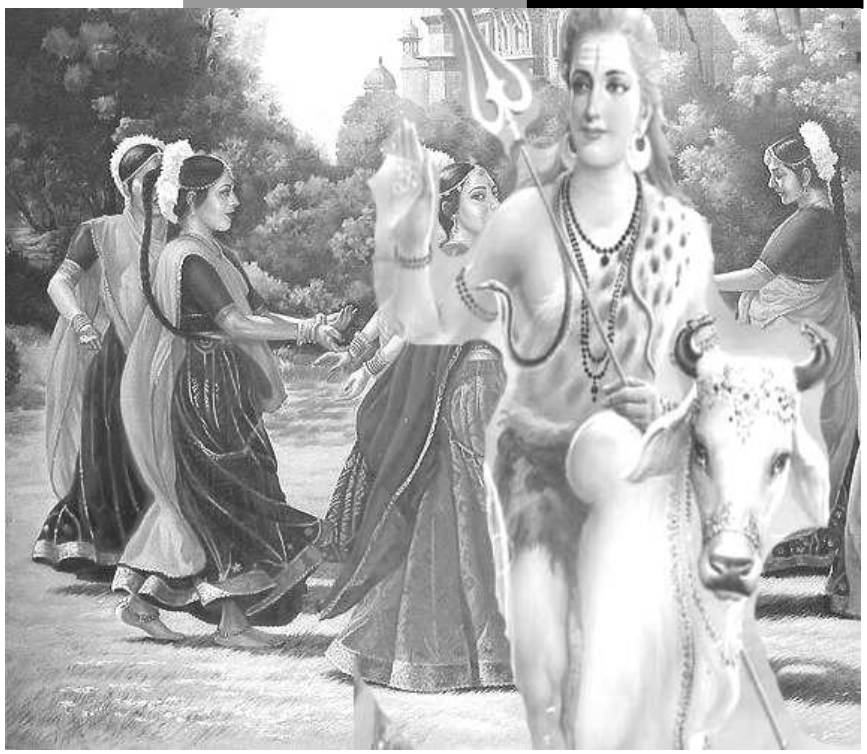

मंगल गीत गाने लगीं। ब्राह्मण स्वस्ति वाचन कहते हुए वेद ध्वनि करने लगे। शंख आदि अनेकों बाजे बजने लगे। श्रीपार्वतीजी पधारीं, अपने माता-पिता को प्रणाम किया। उन लोगों ने कण्ठ से लगाकर आशीर्वाद दिए। नगर में पहुँचकर अत्यन्त प्रसन्न होकर श्रीपार्वतीजी की प्रशंसा करने लगे। इसके बाद सबकी प्रसन्नता के लिए हिमाचल श्रीगंगाजी पर स्नान करने को चले। उसी समय भगवान् शंकरजी नट रूप धारण करके डमरू आदि बजाते तथा नाचते हुए मैना के समीप आकर नाचने लगे तथा शिव डमरू की सुन्दर ध्वनि करने लगे। जिसे सुनकर एवं देखकर नगर निवासी और मैना मोहित हो गईं। श्रीपार्वतीजी भी उनका त्रिशूल आदि चिन्ह देखकर अपनी सुध-बुध भूल गईं। तब मैना स्वर्ण पात्र में रत्न आदि भरकर उन्हें भिक्षा देने लगीं। भिक्षुक रूप रुद्रदेव यह देखकर बोले-यदि आप प्रसन्न हो गईं तो अपनी कन्या का दान मुझे कर दो। ऐसा कहकर फिर नृत्य करने लगे। इतना सुनकर मैना क्रोध में आ गईं और उन्हें बाहर निकालने के लिए तत्पर हो गईं। तब तक हिमाचल भी गंगा स्नान करके लौटे। अपने आँगन में भिक्षुक को देखकर मैना से सारा वृत्तान्त भी सुना। तब तो हिमाचल भी क्रोध करके नौकरों से बोले-इस नट को शीघ्र ही बाहर निकाल दो। नौकरों ने उन्हें अग्नि के समान तेजस्वी देखा। सदाशिव को छू भी न सके। सदाशिव ने अपने तेज से विष्णु आदि स्वरूप दिखाए। उन्हें देखकर हिमाचल भी अत्यन्त आश्चर्य में आ गये। फिर भगवान् रुद्र ने श्रीपार्वतीजी के साथ हिमाचल को

अपना अद्‌भुत रूप दिखलाया, फिर पार्वतीजी की याचना करने लगे। किन्तु शिवमाया से मोहित हो हिमाचल ने उनके वचन नहीं माने। तब तो भगवान् शंकर अन्तर्धान हो गये। उसके बाद ही मैना तथा हिमाचल को समझ आई। अरे यह स्वयं भगवान् शिव ही थे जो स्वयं पधारकर कन्या की भिक्षा माँगने आये थे। हमने यह क्या किया? सदाशिव को विमुख लौटा दिया।

(शिव-माया वर्णन)

ब्रह्माजी बोले-हे नारदजी! श्रीपार्वती की सदाशिव में कामरहित भक्ति देखकर इन्द्रादिक देवता विचार करने लगे। हिमाचल अपनी कन्या का दान करके तो दुर्लभ मोक्ष पद को प्राप्त कर लेगा और पृथ्वी का भी त्याग कर देगा तब तो पृथ्वी रत्नों से निश्चय ही खाली हो जायेगी। हिमाचल तो दिव्य रूप होकर शिवलोक गामी होगा। तब तो अच्छा नहीं। इस प्रकार आपस में विचार करते-करते सब देवता गुरु बृहस्पतिजी के पास गये। उन्हें जाकर सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाया और कहा कि आप अति शीघ्र हिमाचल के पास पहुँचकर शिवनिन्दा करो जिससे वह अपनी कन्या शंकर को न देकर और किसी को दे दे। इस प्रकार बृहस्पतिजी ने शिवजी का स्मरण करके कहा-हे देवताओ! तुम लोग महा स्वार्थी हो। अपने स्वार्थ में आकर मुझसे शिवनिन्दा कराते हो। क्या मैं ही नरक गामी होऊँ? तुम स्वयं ही वहाँ क्यों नहीं पहुँच जाते जिससे तुम्हारे मनोरथ सिद्ध हो जायें। सप्तऋषि अथवा ब्रह्माजी के ही पास जाकर अपना दु:ख सुनाओ। वे ही तुम्हारे संकट काटेंगे।

ब्रह्माजी बोले-हे नारदजी! तब सारे देवता मेरे पास आ गये और मुझे सारा वृत्तान्त सुनाया। तब मैंने कहा-हे देवताओं! मैं भगवान् शंकर की निन्दा नहीं करूँगा, क्योंकि वह निन्दा सुख-शान्ति का नाश करके संकटों में डाल देती है। तुम स्वयं भगवान् शिव के पास पहुँचकर उन्हें प्रसन्न करो, वे स्वयं ही अपनी निन्दा जाकर आप करें।

ब्रह्माजी बोले-हे नारदजी! तब सारे देवता मेरे पास आ गये और मुझे सारा वृत्तान्त सुनाया। तब मैंने कहा-हे देवताओ! मैं भगवान् शंकर की निन्दा नहीं करूँगा, क्योंकि वह निन्दा सुख-शान्ति का नाश करके संकटों में डाल देती है।

तब ब्रह्माजी बोले-इस प्रकार मेरे कथन को सुनकर देवता कैलाश पर पहुँचे। वहाँ शिवजी का दर्शन कर उन्हें नमस्कार किया और स्तुति करने लगे। स्तुति करके देवता बोले-हे शम्भो! हम आपकी शरण में आये हैं। आपको बार-बार नमस्कार है। इस प्रकार प्रार्थना करके देवताओं ने सदाशिव को अपना कष्ट सुनाया। देवताओं के कथन को सुनकर सदाशिव ने उनकी बात मान ली। देवता भी अपने-अपने लोकों में भगवान् शंकर को प्रसन्न कर चले गये। उनके बाद शंकर हाथ में छाता तथा दण्ड लेकर सुन्दर-सुन्दर वस्त्र धारण करके हाथ में शालिग्राम धारण किए साधुओं जैसा रूप बनाकर हरि-हरि बोलते हुए हिमाचल की सभा में पधारे।

उस समय हिमाचल बन्धु वर्गों के साथ तथा पार्वती के साथ सभा में बैठे हुए थे। साधु रूपधारी रुद्र को देखकर हिमाचल सिंहासन से उठ खड़े हुए। भक्तिपूर्वक बार-बार उन्हें प्रणाम किया। श्रीपार्वतीजी ने तो साधु वेषधारी रुद्र को भगवान् को पहचान लिया। उन्होंने भी भक्ति के साथ प्रणाम किया।

हिमाचल के दिए हुए सिंहासन पर विराजमान होकर भगवान् शंकर बोले-हे हिमाचलराज! मैं वैष्णव ब्राह्मण हूँ। परोपकार करना मेरा धर्म है। भिक्षा माँगकर अपना पालन कर लेता हूँ। मुझ पर गुरुदेव की परम कृपा है। मैं सब जगह बिना परिश्रम अपनी इच्छा से भ्रमण करता रहता हूँ। मैंने सुना है कि तुमने कमलों के समान नेत्रवाली अपने परम सुन्दरी कन्या को निराश्रित एवं विचारहीन तथा भिक्षावृत्ति वाले शिव को देने का विचार रखा है। हे शैलराज! इसमें आपने अपनी हानि-लाभ का कुछ भी विचार नहीं किया। आपकी समता शिव कदापि नहीं कर सकता। पार्वती को क्या मालूम, वह तो उसी के साथ विवाह करना चाहेगी। अनुभव न होने के कारण उसको अपने दु:ख का ज्ञान नहीं है। हे शैलेन्द्र! तुम उसकी बात पर न जाओ। शिव के साथ उसका विवाह न करो। ब्रह्माजी बोले-हे नारदजी! इस प्रकार कहकर शंकर चले गये।

-शेष अगले अंक में -क्रमश:

चौथा अध्याय

देख मनुज के गुण-कर्मो को चार वर्ण का किया सृजन।
मेरे द्वारा किया गया यह, फिर भी किया अकर्त्ता बन।।
ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र ये चार वर्ण कहलाते हैं।
गुण, स्वभाव, कर्मो के ही अनुकूल वर्ण वे पाते है।।

कर्मलिप्त मैं कभी न रहता, नीं फलों की चाह मुझे।
सत्यरूप में पूर्ण रहूँ, मैं नहीं कोई परवाह मुझे।।
मेरे इस स्वरूप को जिसने तत्त्वरूप से जान लिया।
बंधनमुक्त उसे भी जानो जो सच को पहचान लिया।।

भूतकाल में मोक्षकामियों ने इसको पहचाना था।
मुझे और निज-कर्म-मर्म को भलीभाँति ही जाना था।।
उनके पथ पर तुझको भी चलना ही श्रेयस्कर है।
जो उनका अनुसरण करे वह तो पा लेता ईश्वर है।।

बुद्धिमान भी कर्म-अकर्म विषय में भ्रम में रहते हैं।
अज्ञानी तो सदा मोह के तूफानों में बहते हैं।।
इसीलिए मैं कर्मयोग को भलीभाँति समझाता हूँ।
कर्म-बंधनों से बचने का मैं उपाय बतलाता हूँ।।

क्या होते हैं कर्म-अकर्म, समझना होगा।
गहन कर्म की गति होती है, इसे जानना होगा।।
जो देखे अकर्म कर्म में बुद्धिमान वह योगी है।
इसके उल्टा जो देखे वह बुद्धिमान है भोगी है।।

कर्म करे पर रहे अकर्त्ता, द्वन्द्व रहित जो सदा रहे।
सभी कर्म है ईश समर्पित, यही चित्त में भाव गहे।।
अहम् त्याग निष्काम भाव से जो सत्कर्म किया करता।
उसके कर्म अकर्म बनेंगे, बंधन मुक्त जिया करता।।

वास्तव में माया है कर्त्ता, जो मुझसे ही भासित है।
मुझसे ही अस्तित्व सभी का, मुझसे ही परिभाषित है।।
स्वतः हो रहे सभी कर्म है, मैं निर्लिप्त रहूँ निष्काम।
अनासक्त हूँ, अहम्मुक्त हूँ, नहीं चाहता हूँ परिणाम।।

इसी रूप में मुझे देखने वाला प्राणी योगी है।
बद्ध वही जो उल्टा जाने, कर्मफलों का भोगी है।।
गहन तत्त्व है कर्म, विकर्म, अकर्म, इसे भी तुम जानो।
वेद-शास्त्र अनुकूल कर्म को तत्त्वरूप में पहचानो।।

परमात्मा में लीन आत्मा उसके साथ जुड़ी रहती।
देह स्वतः स्वकर्म निभकर अपना काम किया करती।।
ज्ञान अग्नि में जिनके सारे कर्म भस्म हो जाते।
मोक्ष प्रप्त कर लेते हैं वे, सत्योलक को पाते हैं।।

संकल्प और कामनारहित शास्त्रोक्त कर्म जो करते हैं।
ज्ञान अग्नि में जिनके सारे कर्म भस्म हो मरते हैं।।
ऐसे महापुरुष जन ही तो पंडितगण कहलाते हैं।
वे ही सच्चे योगी होते, परमात्मा को पाते हैं।।

-क्रमशः

सूत्र साहित्य का संक्षिप्त परिचय

(गतांक से आगे....)

❑ डॉ. देवेन्द्र गुप्ता

ब्रह्मचर्याश्रम

1. सर्वारण्यक-ये वन की सभी प्रकार की खाद्य वस्तुओं का भक्षण करते थे। इनके दो प्रकार होते थे। प्रथम वे जो इन्द्र अर्थात् वृष्टि द्वारा उत्पन्न वृक्ष, लताओं तथा झाड़ियों को पकाकर खाते थे 'इन्द्रावसिक्त' कहलाते थे। द्वितीय वे जो बाघ, भेड़िया तथा बाज आदि हिंसक जानवरों तथा पक्षियों द्वार मारे गये पशु-पक्षियों के मांस को पकाकर खाते थे, 'रेतोवसिक्त' कहलाते थे।

2. वैतुषिक-जो बिना कुटे गये जंगली अन्न को खाकर जीवन निर्वाह करते थे।

3. कन्दमूलभक्ष-जो केवल कन्द-मूल खाते थे।

4. फलभक्ष-जो केवल फलाहार करते थे।

5. शाकभक्ष-जो केवल वन के शाक का भक्षण कर जीवन निर्वाह करते थे। इसी प्रकार अपचमानक के पांच प्रमुख भेद थे-

1.उन्मज्जक-जो लोहे अथवा पत्थर के उपकरणों का प्रयोग न करते हुए अपना भोजन तैयार करते थे।

2. प्रवृत्ताशिन-जो बिना किसी पात्र की सहायता से एकमात्र हाथों से भोजन करते थे।

3. मुखेनादायिन-जो बिना हाथों की सहायता से पशुओं की भांति केवल मुख से भोजन करते थे।

4. त्यौहार-जो केवल जल पर निर्भर करते थे।

5. वायुभक्षक-जो केवल वायु-भक्षण करते थे। वैखानस के अनुसार भी वानप्रस्थी दो प्रकार के होते थे। 1. सपत्नीक और 2.अपत्नीक। फिर सपत्नीक वानप्रस्थी चार प्रकार के होते थे। 1. औदुम्बर, 2. वैरिञ्च, 3. बालखिल्य, 4. फेनप।

1. औदुम्बर-ये उत्तम फलों को ग्रहण करने वाले, औषधीय भोजन करने वाले तथा

ये वन की सभी प्रकार की खाद्य वस्तुओं का भक्षण करते थे। इनके दो प्रकार होते थे। प्रथम वे जो इन्द्र अर्थात् वृष्टि द्वारा उत्पन्न वृक्ष, लताओं तथा झाड़ियों को पकाकर खाते थे 'इन्द्रावसिक्त' कहलाते थे।

फल-फूल खाने वाले होते थे। ये नमक, हींग, लहसुन, मधु, मछली, मांस, अपवित्र अन्न तथा धान्य का भक्षण नहीं करते थे। ये वनैचर होकर, दूसरों के स्पर्श एवं वाणी का व्यवहार त्यागकर देवता, ऋषि, पितृ, मनुष्य सबका सम्मानपूर्वक पूजन करते हुए गांव से बाहर रहकर प्रात: सायं हवन कर तपस्या में लगे रहते थे।

2. वैरिञ्च-ये वानप्रस्थी प्रात:काल जिस दिशा में देखते थे उस दिशा में जाकर प्रियंगु, जौ, श्यामक तथा नीवार को इकट्ठा करके उसके द्वारा अतिथियों का स्वागत करते थे और अग्निहोत्र करते थे।

3. बालखिल्य-ये वानप्रस्थी जटाधारी और वल्कल वस्त्र धारण करते थे सूर्य के समान देदीप्यामन दिखाई देते थे।ये पूर्णमासी के दौरान पर्याप्त भोजन कर शेष माह कठोर तपस्या करते थे।

4. फेनप-ये वानप्रस्थी दण्ड धारण करके वैश्वदेव होम करते थे और सूर्य की पूजा करते हुए तपस्या में लगे रहते थे।

अपत्नीक वानप्रस्थी भी अनेक प्रकार के होते थे। ये कलशधारी, उच्च दण्ड युक्त, पत्थर से कूटकर फल खाने वाले, दाँत को ही उखल बनाकर पिसे हुए अन्न का भोजन करने वाले, कबूतर की वृत्ति अपनाने वाले, मृगों की भाँति विचरण करने वाले, हाथों से ग्रहण करने वाले, पर्वतीय फलों का भक्षण करने वाले, पञ्चाग्नि के मध्य बैठने वाले, वीरासन में शयन करने वाले, धूम भक्षण करने वाले, पत्थर पर सोने वाले, स्नान करने वाले, जलकुम्भ में रहने वाले, मौनव्रत धारी, नीचे सिर करके रहने वाले, सूर्य की ओर देखे वले, ऊपर को भुजा करके रहने वाले, नीचे भुजाएं झुकाने वाले और एक पैर पर खड़े होने वाले अनेक प्रकार के होते थे।

इसी प्रकार महाकाव्यों में भी वानप्रस्थों की अनेक कोटियों यथा वैखानस, बालखिल्य, सम्प्रक्षाल, मरीचिप, अश्मकुट्ट, शीर्णपर्णाशन, पत्राहार, तापस, दन्तोलूखली, उन्मज्जक, गाक्षत्रशय्य अशय्य, अनवकाशिक, मुनि, सलिलाहार, वायुभक्ष, आकाश-निलय, स्थण्डिल- शाही, उर्ध्ववासी, दान्त, आर्द्रपटवासा सजप, तपोनिष्ठ तथा पञ्चाग्निसेवी आदि का उल्लेख मिलता है।

वानप्रस्थ के पश्चात् व्यक्ति संन्यासाश्रम में प्रवेश करता था जहाँ वह समस्त सांसारिक वस्तुओं का पूर्ण रूपेण त्यागकर एकाकी एवं तपस्वी जीवन व्यतीत करता हुआ इन्द्रियों और मन को वश करके मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रयास करता था। बौधायन के अनुसार वह गृहस्थ जिसे सन्तान न हो या जो विधुर हो या अपने पुत्रों को भली-भाँति अपने कर्मो में लगा चुका हो या जो 70 वर्ष की अवस्था का हो चुका हो तथा वानप्रस्थाश्रम के अपने सभी कर्त्तव्यों को पूरा कर चुका हो तो उसे संन्यास ग्रहण कर लेना चाहिए।

इस प्रकार इस आश्रम में व्यक्ति सांसारिकता एवं भौतिकता से दूर रहकर कठोर तप, साधना और संयम का जीवन व्यतीत करते हुए मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रयास करता था और अपनी सद् प्रवृत्तियों द्वारा समाज का कल्याण करने का प्रयत्न करता था। वह अपने अध्ययन और मनन द्वारा जनता को उपदेश देकर उनको सन्मार्ग की ओर प्रेरित करने का प्रयास करता था। वानप्रस्थियों की कुटियों में गृहस्थ तो अपनी समस्याओं को लेकर आते ही थे, ब्रह्मचारी या विद्यार्थी आकर नि:शुल्क भिक्षा ग्रहण करते थे। प्राय: राजा भी मुनियों के सम्पर्क में आकर उनसे प्रजा पालन की उदात्त नीति की दीक्षा लेते थे। नि:स्वार्थ भाव से किया गया उनका यह कार्य सामाजिक अभ्युदय का कारण बनता था।

संन्यासाश्रम

वानप्रस्थ के पश्चात् व्यक्ति संन्यासाश्रम में प्रवेश करता था जहाँ वह समस्त सांसारिक वस्तुओं का पूर्ण रूपेण त्यागकर एकाकी एवं तपस्वी जीवन व्यतीत करता हुआ इन्द्रियों और मन को वश करके मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रयास करता था। बौधायन के अनुसार वह गृहस्थ जिसे सन्तान न हो या जो विधुर हो या अपने पुत्रों को भली-भाँति अपने कर्मों में लगा चुका हो या जो 70 वर्ष की अवस्था का हो चुका हो तथा वानप्रस्थाश्रम के अपने सभी कर्त्तव्यों को पूरा कर चुका हो तो उसे संन्यास ग्रहण कर लेना चाहिए। महाभारत के अनुसार जीवन के अन्तिम भाग में वानप्रस्थाश्रम की अवधि पूरी होने पर अर्थात् 75 वर्ष की आयु हो जाने पर वृद्धावस्था के कारण जब शरीर दुर्बल और विविध रोगों से ग्रस्त हो जाए तब वानप्रस्थाश्रम को त्यागकर संन्याश्रम में प्रवेश करना चाहिए। मनुस्मृति के टीकाकार कुल्लूक भट्ट के अनुसार वानप्रस्थ में रहकर जब व्यक्ति रागद्वेषादि पर विजय प्राप्त करके जितेन्द्रिय हो जाए तब ही संन्यास ग्रहण

करना चाहिए। इस प्रकार इस आश्रम में प्रवेश की कोई निश्चित आयु नहीं थी। वास्तव में विभिन्न आश्रमों का प्रारंभ और अन्त विभिन्न व्यक्तियों की योग्यताओं और परिस्थितियों के अनुसार अलग-अलग अवस्थाओं में होता था। विष्णु के अनुसार संन्यास ग्रहण करने वाले व्यक्ति को प्रजापति यज्ञ करना चाहिए और अपनी सारी सम्पत्ति पुरोहितों, दरिद्रों एवं असहायों में बांट देनी चाहिए।

इस आश्रम में प्रवेश करने वाले व्यक्ति को अनेक नामों से पुकारा जाता था। इनमें यति, मौन, परिव्राजक, परिव्राट, भिक्षु एवं संन्यासी आदि नाम विशेष उल्लेखनीय है। वानप्रस्थाश्रम में तो व्यक्ति पत्नी को अपने साथ रख सकता था लेकिन इस आश्रम में प्रवेश करने पर उसे अपने घर, सम्पत्ति, स्त्री एवं पुत्रादि सभ का त्याग करना पड़ता था और संन्यास के रूप में उसका दूसरा नामकरण होता था। इस आश्रम में वह वानप्रस्थी की भाँति किसी एक स्थान पर कुटिया बनाकर नहीं रहता था अपितु निरन्तर भ्रमणशील रहता था। संक्षेप में इस आश्रम में व्यक्ति के सारे सांसारिक बन्धन छूट जाते थे और वह एकाग्रचित्त होकर मोक्ष की प्राप्ति के लिए प्रयास करता था।

प्राय: सभी सूत्रकारों ने अन्य आश्रमों की भाँति संन्यासाश्रम के लिए भी कर्त्तव्यों का निर्धारण किया है। सूत्रकारों के अनुसार संन्यासी को घर, अग्नि, सुख एवं सुरक्षा आदि से अलग होकर मौन रहना चाहिए और केवल वेद के स्वाध्याय के समय ही बोलना चाहिए। बौधायन के अनुसार उसे मौन व्रत का पालन करते हुए तीनों वेदों के गम्भीर विद्वानों, आचार्यों, मुनियों, अत्यन्त विद्वान नैष्ठिक ब्रह्मचारियों या तपस्वियों के साथ दांतों को दबाए हुए ही, मुख के भीतर ही जितना आवश्यक हो उतना ही बोलना चाहिए। ऐसा करने से व्रत का लोप नहीं होता। गौतम के अनुसार संन्यासी को ब्रह्माचारी होना चाहिए और सदा ध्यान एवं आध्यात्मिक ज्ञान के प्रति भक्ति रखनी चाहिए एवं इन्द्रिय सुख

आपस्तम्ब के अनुसार उसे भोजन बनाने के लिए श्रौताग्नि, गृह्याग्नि एवं लौकिक अग्नि नहीं जलानी चाहिए और केवल भिक्षा मांगकर जीवन निर्वाह करना चाहिए। उसे दिन में केवल एक बार ही भिक्षा मांगना चाहिए और वह भी ऐसे घर से, जहाँ पहले से अन्य कोई साधु, भिक्षुक या ब्राह्मण आदि न गया हो। बौधायन के अनुसार भिक्षा मांगते समय उसे भवत शब्द का प्रयोग पहले करना चाहिए। उसे बिना किसी पूर्व नियोजना ने केवल ात घरों से भिक्षा मांगनी चाहिए।

और आनन्दप्रद वस्तुओं से दूर रहना चाहिए। वसिष्ठ के अनुसार संन्यास ग्रहण करने वाले व्यक्ति को अपने सिर के बाल मुंडा देने चाहिए। उसे अपनी समस्त सम्पत्ति को त्याग देना चाहिए और न ही रहने के लिए उसके पास कोई घर होना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने पर वह शूद्र के समान माना जाता है। इसलिए उसे वेदों का स्वाध्याय कभी बन्द नहीं करना चाहिए। और केवल भिक्षा मांगकर जीव निर्वाह करना चहिए। आपस्तम्ब के अनुसार उसे भोजन बनाने के लिए श्रौताग्नि, गृह्याग्नि एवं लौकिक अग्नि नहीं जलानी चाहिए और केवल भिक्षा मांगकर जीवन निर्वाह करना चाहिए। उसे दिन में केवल एक बार ही भिक्षा मांगना चाहिए और वह भी ऐसे घर से, जहाँ पहले से अन्य कोई साधु, भिक्षुक या ब्राह्मण आदि न गया हो। बौधायन के अनुसार भिक्षा मांगते समय उसे भवत शब्द का प्रयोग पहले करना चाहिए। उसे बिना किसी पूर्व नियोजन ने केवल सात घरों से भिक्षा मांगनी चाहिए। उसे भिक्षा न मिलने पर तथा अपमानित होने पर भी शोक नहीं करना चाहिए और न ही किसी संन्यासी से भिक्षा मांगनी चाहिए। उसे भिक्षा न मिलने पर तथा अपमानित होने पर भी शोक नहीं करना चाहिए और न ही किसी संन्यासी से भिक्षा मांगनी चाहिए। साथ ही उसे भिक्षा उस समय मांगनी चाहिए जब मूसल चलने बन्द हो गये हो, चुल्हे की आग बुझ गयी हो, सभी लो खा चुके हों तथा जूठे बर्तनों की सफाई की जा चुकी हो जिससे गृहस्थ को किसी असुविधा का सामना न करने पड़े। विष्णु के अनुसार उसे मिट्टी के पात्रों, लकड़ी के कटोरे अथवा लौकी के बने पात्र में भिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। उसे वह बर्तन केवल पानी से धोना चाहिए। उसे केवल पकाए हुए अन्न की भिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। उसे न तो अधिक भिक्षा की प्राप्ति में आसक्त होना चाहिए और न ही अधिक के लोभ में आशार्वाद देना चाहिए। एक गाय को दुहने में जितना समय लगता है उतना ही समय भिक्षा मांगने में लगाना चाहिए। इसके उपरान्त वहां से चले जाना चाहिए। वैखानस

के अनुसार उसे मुँह नीचा करके भिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। वसिष्ठ के अनुसार उसे न मिलने पर विषाद और अधिक मिलने पर प्रसन्नता नहीं करनी चाहिए। बौधायन ने अन्य आचार्यों के मत को उद्धत करते हुए कहा है संन्यासी किसी भी वर्ण के यहाँ भिक्षा मांग सकता है। किन्तु उसे भोजन केवल द्विजातियों के यहाँ ही करना चाहिए। जबकि वसिष्ठ के अनुसार वह केवल ब्राह्मणों के यहाँ ही भिक्षा मांग सकता है। वैखानस के अनुसार उसे भिक्षा के लिए एक कोस से अधिक नहीं जाना चाहिए। भैक्षचर्या से लौटकर भिक्षा को पवित्र स्थान पर रखकर हाथ-पैर धोने चाहिए और फिर प्राप्त भिक्षान्न को पहले सूर्य को बाद में ब्रह्मा को निवेदित करना चाहिए। इसके पश्चात दयापूर्वक प्राणियों को अपने भोजन का अंश देकर अवशिष्ट अन्न पर जल छिड़क कर औषधि के समान उसका भक्षण करना चाहिए। उसे केवल उतना ही भोजन करना चाहिए जितने से वह अपना जीवन चला सके। बौधायन के अनुसार उसे आठ ग्रास ही भोजन करना चाहिए। वसिष्ठ के अनुसार उसे प्रातः और सायंकाल एक ब्राह्मण के घर से भिक्षा में जो कुछ भी मिले वही खाना चाहिए लेकिन मधु एवं मांस का भक्षण नहीं करना चाहिए और न ही जरूरत से ज्यादा खाना चाहिए। वैखानस के अनुसार भी उसे जीने लायक केवल आठ ग्रास ही भोजन करना चाहिए और न अधिक न इच्छानुसार भोजन करना चाहिए। भोजन और आचमन करने के पश्चात 'वाङ्म आसन्नसोः प्राण' मंत्र का जाप करना चाहिए और ज्योतिष्मति मंत्र से सूर्य की प्रार्थना करनी चाहिए। उसे चौथे, छठे और आठवें भोजन काल के समय ही भोजन करना चाहिए। उसे अपने आप गिरे हुए औषधियों और वृक्षों एवं लताओं के पत्ते, फूल, फल, मूल और शाखा को ग्रहण नहीं करना चाहिए। उसे किसी प्रकार का संग्रह नहीं करना चाहिए। बौधायन के अनुसार उसे कभी ऐसे जल से आचमन नहीं करना चाहिए जो कुएं आदि से निकाला गया हो। जो छाना न गया हो और जो पूरी तरह से

साफ न किया गया हो। उसे जल को सदैव वस्त्र से छानकर पीना चाहिए। उसे ऊर्ध्वरिता, अर्थात वीर्य भंग नहीं होने देना चाहिए। सबको अभयदान देना चाहिए। उसे मन, वाणी, नेत्र और कर्म पर संयम रखना चाहिए। अथवा अपने मन को भटकने नहीं देना चाहिए, अधिक नहीं बोलना चाहिए, इधर-उधर नहीं देखना चाहिए। विहित कर्मों के अतिरिक्त कर्म नहीं करने चाहिए। संसार के प्रति अनित्यतता का भाव रखना चाहिए, शरीर की सुन्दरता की तरफ ध्यान नहीं देना चाहिए। शारीरिक और मानसिक कष्टों की तरफ ध्यान नहीं देना चाहिए, सभी कष्टों को सहजता से स्वीकार करना चाहिए और अप्रिय वस्तुओं से संयोग तथा प्रिय वस्तुओं से वियोग नहीं करना चाहिए। उसे सत्य और असत्य, सुख और दुःख इहलोक और परलोक का परित्याग करके निरन्तर परमात्मा का चिन्तन करना चाहिए। उसे नियमित रूप से प्राणायाम, मन को एकाग्रचित्त तथा चिन्तन करना चाहिए। वसिष्ठ के अनुसार संन्यासी के लिए 'ओ3म्' का उच्चारण परम ब्रह्म के समान है, प्राणायाम परम तप है, उपवास रखने से अच्छा भिक्षा मांगना है और दान से बढ़कर दया है। बौधायन के अनुसार उसे अग्नि नहीं रखनी चाहिए, गृह में नहीं रहना चाहिए, कुछ ग्रहण नहीं करना चाहिए और न ही किसी को शरण में रखना चाहिए। उसे गुप्तांगों को ढकने के लिए ही वस्त्र धारण करने चाहिए और वह कौपीन (लंगोटी) भी पुरानी अर्थात् दूसरे के द्वारा परित्यक्त हो, जिसे वह धोकर पहने। जबकि कुछ शास्त्रकारों के अनुसार उसे सभी वस्त्रों को त्यागकर नग्न रहना चाहिए। बौधायन तथा बैखानस के अनुसार उसे काषाय वस्त्र धारण करने चाहिए। उसे अपने सभी केशों, दाढ़ी, मूंछ, शरीर के रोम तथा नखों को कटवा देना चाहिए अथवा शिखा को छोड़कर सिर के सभी केशों को मुंडवा देना चाहिए। उसे अपने पास केवल दण्ड, शिक्य, (रस्सी से बना हुआ भिक्षापात्र लटकाने का छीका), जल छानने के लिए पवित्र (वस्त्र) कमण्डल और भिक्षापात्र ही रखना चाहिए। वैखानस के अनुसार उसे भूमि के ऊपर जीव-जन्तुओं को देखकर और उनको हटाकर फिर अपने पैरों को आगे रखना चाहिए।

बौधायन तथा बैखानस के अनुसार उसे काषाय वस्त्र धारण करने चाहिए। उसे अपने सभी केशों, दाढ़ी, मूंछ, शरीर के रोम तथा नखों को कटवा देना चाहिए अथवा शिखा को छोड़कर सिर के सभी केशों को मुंडवा देना चाहिए। उसे अपने पास केवल दण्ड, शिक्य, (रस्सी से बना हुआ भिक्षापात्र लटकाने का छीका), जल छानने के लिए पवित्र (वस्त्र) कमण्डल और भिक्षापात्र ही रखना चाहिए।

-क्रमशः

कैसे बनाएं एक आदर्श संयुक्त परिवार

प्रो. वीरेन्द्र अग्रवाल

असुरक्षा का भय बना रहता है। इसके विपरीत संयुक्त परिवार यानी रिश्तों की मजबूत कड़ी। इसके अलावा भावनात्मक सुरक्षा, बच्चों का सही विकास, काम का बंटवारा, रिश्तों को निभाना सभी कुछ तो देता है संयुक्त परिवार। इसमें फायदे ज्यादा हैं नुकसान कम। संयुक्त परिवार समाज की शान हैं। इसमें रहने वाले स्वयं को सुरक्षित महसूस करते हैं एवं वे अपने भविष्य को लेकर चिंतित नहीं होते। संयुक्त परिवार कोई फैशन या परम्परा नहीं है बल्कि सबकी एक दूसरे की जरूरत है।

संयुक्त परिवार में रहने का एक अलग ही आनन्द है। एकाकी जीवन भी भला कोई जीवन है ? जब तक परिवार संयुक्त रहता है, परिवार का हर सदस्य एक अनुशासन में रहता है। उसको कोई भी गलत कार्य करने के पहले बहुत सोचना समझना पड़ता है, क्योंकि उस पर परिवार की मर्यादा का अंकुश रहता है।

संयुक्त परिवार में रहने का एक अलग ही आनन्द है। एकाकी जीवन भी भला कोई जीवन है ? जब तक परिवार संयुक्त रहता है, परिवार का हर सदस्य एक अनुशासन में रहता है। उसको कोई भी गलत कार्य करने के पहले बहुत सोचना समझना पड़ता है, क्योंकि उस पर परिवार की मर्यादा का अंकुश रहता है। यह अंकुश हटने के बाद वह बगैर लगाम के घोड़े की तरह हो जाता है। लेकिन संयुक्त परिवार में अगर सुखी रहना है तो 'लेने' की प्रवृत्ति का परित्याग कर 'देने' की प्रवृत्ति रखनी पड़ेगी। परिवार के हर सदस्य का नैतिक कर्तव्य है कि वे दूसरे की भावनाओं का आदर कर आपस में तालमेल रख कर चलें। ऐसा कोई कार्य न करें जिससे कि दूसरे की भावनाओं को ठेस पहुँचे। किसी भी विषय को कृपया अपनी व्यक्तिगत प्रतिष्ठा का प्रश्न न बनावें। गम खाकर और त्याग करके ही संयुक्त परिवार चलाया जा सकता है। इसमें भी सबसे अहम भूमिका परिवार प्रधान की होती है। हमें शंकर भगवान के परिवार से शिक्षा लेनी चाहिये। उनके परिवार के सदस्य हैं-पत्नी उमा (पार्वती), पुत्र गणेश और कार्तिकेय। सदस्यों के वाहन है- नन्दी (बैल), सिंह, चूहा और मयूर (मोर)। शंकर भगवान के गले में सर्पों की माला रहती है। परिवार के मुखिया की हैसियत से उनको एकता के सूत्र में बाँधे रहते हैं। विभिन्न प्रवृत्तियों वाले भी एक साथ प्रेम से रहते हैं। इसी तरह संयुक्त परिवार में भी विभिन्न स्वभाव के सदस्यों का होना स्वाभाविक है। लेकिन उनमें सामंजस्य एवं एकता बनाये रखने में परिवार प्रमुख को मुख्य निभानी पड़ती है। उसको भगवान की तरह समदर्शी होना पड़ता है। विभिन्नता में एकता रखना ही तो हमारा भारतीय आदर्श रहा है। इसीलिये कहा गया है-भारत में अनेकता में एकता है। शंकर भगवान के परिवार के वाहन ऐसे जीव हैं, जिनमें सोचने समझने की क्षमता नहीं है। इसके उपरान्त भी वे एक साथ प्रेम पूर्वक रहते हैं। फिर भला हम मनुष्य योनि में पैदा होकर भी एक साथ प्रेमपूर्वक क्यों नहीं रह सकते ? आज छोटा भाई बड़े से राम बनने की अपेक्षा करता है, किन्तु स्वयं भरत बनने को तैयार नहीं। इसी तरह बड़ा भाई छोटे भाई से अपेक्षा करता है कि वह भरत बनें लेकिन स्वयं राम बनने को तैयार नहीं। सास बहू से अपेक्षा करती है कि वह उसको माँ समझे, लेकिन स्वयं बहू को बेटी मानने को तैयार नहीं। बहू चाहती है कि सास मुझको बेटी की तरह माने, लेकिन स्वयं सास को माँ जैसा आदर नहीं देती। पति -पत्नी से अपेक्षा करता है कि वह सीता या सावित्री बने पर स्वयं राम बनने को तैयार नहीं। यह परस्पर विरोधाभास ही समस्त परिवार-कलह का मूल कारण होता है। थोड़ी सी स्वार्थ भावना का त्याग कर एक दूसरे की भावनाओं का आदर करने मात्र से ही बहुत से संयुक्त परिवार टूटने से बच सकते हैं। एकाकी परिवार में हर समय एक

कहते है कि अमेरिका में मदर्स डे, फादर्स डे मनाते है, पर हमारे यहाँ ऐसी कोई परम्परा नहीं है। यहाँ वर्ष भर तो माँ-बाप को कोई पूछता नहीं है और उन्हें अकेलापन भुगतना पड़ता है। वहाँ की सन्तानें वर्ष में एक दिन फूल पकड़ा कर अपने कर्तव्य की इतिश्री मान लेती हैं। यह हमारी भारतीय संस्कृति या परम्परा ही है कि आज भी बहुत से परिवार संयुक्त परिवार की तरह ही चलते हैं एवं सन्तान वृद्धावस्था में माँ-बाप का बुढ़ापा का छाता बनती हैं, उनका दु:ख-तकलीफ बाँटती है और उनको अकेलापन का एहसास नहीं होने देती। वास्तव में उत्तरदायित्वों को निभाने का ही दूसरा नाम संयुक्त परिवार है।

लेकिन संयुक्त परिवार में झगड़े भी कम नहीं होते और उनका मुख्य कारण संपत्ति ही होती है। संपत्ति को लेकर परिवारों में आये दिन झगड़े होते रहते हैं और अन्त में घर बिखर जाते हैं। कानूनी तौर पर जिसके नाम संपत्ति रहती है वह अपने आपको सर्वेसर्वा समझता है एवं उसमें अहं भाव घर कर जाता है। इसी कारण जिनके नाम कुछ नहीं होता, वे विभिन्न आशंकाओं से घिरे रहते हैं एवं अपने भविष्य के प्रति आशंकित होकर अपने को असुरक्षित महसूस करते हैं। ऐसे में स्पष्ट है कि एक पक्ष दूसरे पर हावी होगा और कमजोर पक्ष पर

अमेरिका में मदर्स डे, फादर्स डे मनाते है, पर हमारे यहाँ ऐसी कोई परम्परा नहीं है। यहाँ वर्ष भर तो माँ-बाप को कोई पूछता नहीं है और उन्हें अकेलापन भुगतना पड़ता है। वहाँ की सन्तानें वर्ष में एक दिन फूल पकड़ा कर अपने कर्तव्य की इतिश्री मान लेती हैं। यह हमारी भारतीय संस्कृति या परम्परा ही है कि आज भी बहुत से परिवार संयुक्त परिवार की तरह ही चलते हैं एवं सन्तान वृद्धावस्था में माँ-बाप का बुढ़ापा का छाता बनती हैं।

मनोवैज्ञानिक दबाव पड़ेगा। अत: ऐसी अवस्था में पुरूषों को ठंडे दिमाग एवं समझदारी से काम लेना चाहिये। आपके सुखद भविष्य की गारंटी वर्तमान में आपके जी का जंजाल भी साबित हो सकती है। मेरे यह समझ में नहीं आता कि ''पल की खबर नहीं और सामान सौ वर्ष का'' के चक्रव्यूह में मनुष्य क्यों फँसा रहता है? इसलिए समझदारी इसी में है कि व्यक्तिगत स्वार्थ को त्याग कर सम्पत्ति की कानूनी लिखा-पढ़ी आपस में तालमेल बैठा कर समय रहते ही करवा ली जाय, जिससे सम्पत्ति का बंटवारा परिवार के विघटन का कारण न बने एवं परिवार के सभी सदस्यों में प्रेम बना रहे। झगड़े की जड़ को उगने से पहले ही काट देना चाहिये। यदि ''अधिकार'' के स्थान पर ''कर्तव्य'' प्रतिष्ठित हो जाये अर्थात् परिवार में मेरा अधिकार क्या है? के स्थान पर परिवार के प्रति मेरा कर्तव्य क्या है? यह भावना परिवार के सदस्यों के मन में आ जाये तो घर सच्चे अर्थ में नन्दनवन बन जायेगा।

परिवार को एक सूत्र में जोड़ कर रखने वाली कड़ी है-स्त्री। खासकर संयुक्त परिवार में नववधू जब ससुराल आती है तो सबसे तालमेल बिठाने की पहल उसे ही करनी पड़ती है। लेकिन बाद में ससुराल वालों के बीच अहमियत भी देखते बनती है। संयुक्त परिवार में रहने के लिए परिवार के अन्य सदस्यों के साथ तालमेल बैठाना भी एक कला है। अगर आप उसमें पारंगत हैं तो सबकी आँखों का तारा बन जायेंगी एवं बहुत से अधिकार आपके बगैर कहे ही आपकी झोली में आ जायेंगे। अधिकार माँगे नहीं जाते अपने आप मिल जाते हैं। कहावत भी है-बिन माँगे मोती मिले, माँगे मिले न भीख। बहू के पीहर वालों को भी चाहिये कि वे बहू के ससुराल में अनावश्यक दखलन्दाजी न करें। कई बार देखा जाता है कि बेटी के ससुराल में हस्तक्षेप करके वे अपनी बेटी का अनचाहे ही हित की जगह अहित कर बैठते हैं, जिससे बेटी को जहाँ जीवन भर रहना है-जीना दूभर हो जाता है। कभी भी बेटी का अनावश्यक गलत पक्ष लेकर उसके लिए मुसीबतें न खड़ी करें। संयुक्त परिवार तभी एकता के सूत्र में बँधा रह पाता है जब सभी सदस्य समझदारी से काम लें, छोटी छोटी बातों को नजर अंदाज करें, मन में त्याग की भावना रखें एवं उत्तेजनावश क्रोध में उलटा सीधा बोलकर घर का वातावरण दूषित न करें। क्योंकि शब्दों के तीर दूसरों के दिल में घाव कर जाते हैं और फिर वही घाव नासूर बन कर परिवार के टूटने का कारण बनते हैं। अत: चुप रहकर खुशहाली लाइये और संयुक्त परिवार का आनन्द उठाइये-एक चुप सौ झगड़े का अन्त करती है। ❑

शान्ति-सुख और प्रसन्नता

मिट्टी के टीले पर बैठे हुए सन्त अनाम अस्ताचलगामी भगवान् सूर्य को बड़े ध्यान से देख रहे थे। वे देख रहे थे, किस प्रकार एक दिन महाशक्तियों का भी वैभव नष्ट हो जाता है। सन्त अनाम इन्हीं विचारों में डूबे थे कि एक आदमी उनके समीप आया और प्रणाम कर चुपचाप खड़ा हो गया। मुस्कराते हुये सन्त ने पूछा-'वत्स! मुझ से कुछ काम है?' आगन्तुक ने विनय की-'भगवन्! मैं पुरु देश का धनी सेठ हूँ। तीर्थयात्रा के लिये चलने लगा तो मेरे एक मित्र ने मुझसे कहा-'आप इतने स्थानों की यात्रा करेंगे कहीं से मेरे लिये शान्ति, सुख और प्रसन्नता मोल ले आना।' मैंने अनेक स्थानों पर ढूँढ़ा पर यही तीन वस्तुयें कहीं नहीं मिलीं। आपको अत्यन्त शान्त, सुखी और प्रसन्न देखकर ही आपके पास आया हूँ, सम्भव है आपके पास ही वह वस्तुयें उपलब्ध हो जायें।' सन्त अनाम फिर मुस्कराए और अपनी कुटिया के भीतर चले गये। एक निमित्त के उपरान्त ही लौटकर आये और एक कागज की पुड़िया देते हुए बोले-यह अपने मित्र को दे देना और तब तक इसे कहीं खोलना मत। आगन्तुक पुड़िया लेकर चला गया। मित्र ने एकान्त में ले जाकर उसे खोला और उसमें रखी औषधि का सेवन करके कुछ दिन में ही सुखी, शान्त और प्रसन्न हो गया। एक दिन वह उसी मित्र के पास जाकर बोले-मित्र मुझे भी अपनी औषधि का कुछ अंश दे तो मेरा भी कल्याण हो जाये। मित्र ने पुड़िया खोलकर दिखाई - उसमें लिखा था-अन्त:करण में विवेक और सन्तोष से ही स्थायी सुख-शांति और प्रसन्नता मिलती है।

चमत्कारिक रामबाण औषधियाँ

वैद्य दीपक

● हल्दी, काली मिर्च व सोंठ के पाउडर को 1 से 3 ग्राम तक जल के साथ सेवन करने से जोड़ों में दर्द से शीघ्र आराम मिलता है।

● 100 ग्राम मेथी, 20 ग्राम छोटी हरण और 20 ग्राम सेंधा नमक का मिश्रित चूर्ण पेट की गैस के लिए रामबाण औषधि है। इसे सुबह शाम एक-एक चम्मच जल के साथ लेना चाहिए।

● शिलाजीत का दूध के साथ सेवन करने से जोड़ों के दर्द के साथ-साथ दुर्बलता, उदासी शीघ्र दूर हो जाती है।

● लौकी का जूस हृदय के लिए सुबह एक गिलास कम से कम छह महीने तक सेवन करने से हाई ब्लड प्रेशर व हृदय रोग समाप्त हो जाता है।

● 100 ग्राम शिवलिंगी व 100 ग्राम पुत्रजीवा की गिरी का चूर्ण कर मिला लें। सुबह-शाम एक-एक चम्मच गाय के दूध के साथ सेवन करने से बांझपन अतिशीघ्र ही समाप्त हो जाता है।

● एक चम्मच नारियल का तेल 2 ग्राम सुहागे की खील और नीम के पत्तों का रस 2 चम्मच दही के साथ मिलाकर बालों पर लगाने से रूसी शीघ्र समाप्त हो जाती है।

● अंगुलियों के नाखूनों को दस मिनट तक प्रतिदिन रगड़ने से गंजापन शीघ्र समाप्त हो जाता है।

● एक चम्मच सफेद प्याज का रस एक चम्मच शहद मिलाकर एक साथ लेने से मोतिया बिंद में विशेष लाभकारी है।

● 100 ग्राम सरसों का तेल, 50 ग्राम मोम व 5 ग्राम कपूर एक साथ गरम करके ठंडा करने पर मलहम जैसा बन जाएगा इसको पैरों की बिवाई दूर करने में उपयोग करें।

● 10 ग्राम सज्जी, खाने का चूना (सोड़ा) 2 ग्राम गेरू में मिलाकर मस्से पर लगाने से मस्सा झड़कर गिर जाता है।

● अमरूद के पत्तों को पानी में उबालकर उस पानी से कुल्ला किया जाय तो दाँतों का दर्द, मसूड़ों की सूजन व दाँतों में ठंडा-गरम लगना दूर हो जाता है। दाँतों के कीड़े मरकर बाहर निकल आयेंगे। यह दाँत सम्बन्धित रोगों के लिए अचूक नुस्खा है।

● तुलसी के पेड़ के नीचे बीज गिरते रहते है इनको दिन में दो तीन बार चबाकर या पान के पत्ते में रखकर खाने रक्त शुद्धी होती है।

● यदि बच्चे की नकसीर फूट जाए तो हरे धनिये और दूब का स्वरस मिलाकर तीन-तीन बूँदे नाक में डालने से तुरन्त आराम मिलता है।

● मूत्र में रूकावट हो और खुल कर न आए तो हरा पुदीना पीसकर उसमें मिश्री मिलाकर ठंडे पानी से दिन में तीन-चार बार पीयें। मूत्र खुलकर आएगा।

● पोदीने के सात-आठ पत्ते लेकर और एक अंजीर चबाकर दिन में तीन बार खाएं इससे अन्दर जमा कफ बाहर निकल आएगा।

● कमर व जोड़ों के दर्द में तिल के तेल से कमर व जोड़ों की मालिश करवाएं। यह पक्षघात में भी आराम पहुँचाता है।

● सूखी मेथी का चूर्ण दो से चार ग्राम की मात्रा में सुबह–शाम दूध या गरम पानी से लेते रहने से पुराना गठिया, सब प्रकार के वात रोग, मधुमेह,पुराना कब्ज, आँखों में जलन के रोगों में लाभदायक है। यह भूख को बढ़ाता है और शरीर को पुष्ट करता है।

● इसमें नशा नाशक गुण है। इसमें बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू, शराब इत्यादि नसों की तलब मारने की अद्‌भुत क्षमता है। इनमें से किसी की तलब लगने पर अजवाइन दो ग्राम की मात्रा में लेकर मुँह में रखकर चबायें और उस जगह से उठकर घूमना–फिरना शुरू कर दें। उसी समय में नशे की तलब मर जाएगी।

● अजवायन को सरसों के तेल में पकाकर छान लें। इस तेल की तीन–चार बूंदें जिस कान में दर्द हो रहा हो उसमें डालें। यह प्रयोग दिन में दो या तीन बार करें। कान के दर्द में शीघ्र आराम मिलेगा।

● देशी अजवायन, जंगली अजवायन व खुरासानी अजवायन तीनों को समभाग में लेकर महीन पीस लें। इसमें मक्खन मिलाकर लेप बना लें। इस लेप को बवासीर के मस्सों पर लगाएं। कुछ समय तक ये प्रयोग करने पर मस्से सूख कर नष्ट हो जाएंगे।

● अंजीर खाँसी वाले रोगी को लाभ पहुँचाती है। क्योंकि यह बलगम को पतला कर बाहर निकालती है। अंजीर भिगोकर दूध में उबालकर नित्य दो बार सेवन करने से कफ, खाँसी में लाभ होता है। बलगम के कारण पैदा हुई पुरानी खांसी में भी लाभदायक है। अंजीर रक्त विकार दूर करता है। तीन अंजीर और पांच बादाम भिगोकर दूध में उबालकर सेवन करने से बहुत लाभ होता है। इससे गर्मी भी शांत होती है।

● गौ घृत को आयुर्वेद में अमृत कहा गया

है। इसमें कैलेस्ट्रोल की मात्रा कम होती है। ये पीले रंग का और सुपाच्य होता है। गाय का घी खाने से भारीपन नहीं होता। अगर हाथ पैर के तलवे में जलन होती है तो गाय का घी मलना चाहिए तुरन्त आराम मिलेगा। सिर दर्द में गाय का घी या मक्खन मलना चाहिए। यदि आँखें कमजोर हो और आँखों के आगे अंधेरा छा जाता हो तो गाय के घी के साथ काली मिर्च मिलाकर खायें। अवश्य लाभ होगा।

मधुमेह निवारण अनुभूत प्रयोग

गुड़मार की पत्ती 30 ग्राम, नीम की पत्ती 30 ग्राम, तुलसी की पत्ती 30 ग्राम, सदाबहार की पत्ती 30 ग्राम व फूल 30 ग्राम, बेल की पत्ती 30 ग्राम, जामुन की गुठली 50 ग्राम, जलकलमी 20 ग्राम, वंसलोचन 20 ग्राम, जायफल 10 ग्राम, जावित्री 10 ग्राम, छोटी इलायची 10 ग्राम, तेजपत्ता 10 ग्राम, करेले के बीज 30 ग्राम, मामज्जक 30 ग्राम इन सभी को सुखाकर कूट–पीसकर चूर्ण बना लें। इस चूर्ण को तीन ग्राम प्रात: सायं पानी से लें। विशेष लाभ मिलेगा।

● प्रात: नाश्ते में अनानास का रस या फल काटकर नियमित सेवन करें।

● पांच भाग चने का आटा, 2 भाग जौ का आटा, एक भाग गेहूँ का आटा मिलाकर रोटी बनाएं। यह रोटी मधुमेह व मोटापाग्रस्त व्यक्तियों के लिए विशेष लाभकारी है।

● चिकनगुनिया में नारियल पानी का सेवन करना चाहिए। नारियल पानी लीवर के विषैले पदार्थ को निकालकर बाहर करता है। लीवर शरीर के तापमान को नियंत्रित करता है। लिहाजा उसके सेवन से चिकगुनिया के मरीजों को काफी राहत मिलती है। चिकनगुनिया के बाइरस लीवर में धीरे–धीरे पनपते है और लीवर ही एक ऐसा अंग है जिसे नारियल पानी से लाभ मिलता है। अत: लीवर में नारियल पानी की मौजूदगी से वाइरस दब जाते है। नारियल पानी में काफी मात्रा में पौटेशियम तथा कई अन्य खनिज तत्व पाए जाते है। इसलिए अगर संभव हो तो नारियल पानी का सेवन रोज करना चाहिए। ❐

जीवन की सफलता का रहस्य

अपने जीवन में सबसे बड़ी और मूल्यवान बात जो मैंने सीखी है वह है-साध्य से अधिक साधना की ओर ध्यान देना। यही सफलता का रहस्य है। हम लोगों में सबसे बड़ा दोष यही है कि हम लोग लक्ष्य की ही ओर ध्यान देते हैं और साधन की, कार्यप्रणाली की, ब्यौरे की बातों को भूल जाते हैं। और इसीलिये इसका परिणाम यह होता है कि यदि हम अपने लक्ष्य पर एक बार पहुँच भी गये, यदि हमको एक बार सफलता मिल भी गयी तो भी हमारी वह सफलता स्थायी नहीं होती और हम शीघ्र ही फिसल जाते हैं। हमें सबसे पहले यह बात ध्यान में बैठा लेनी चाहिये कि हमारी कार्यप्रणाली की शुद्धता और अशुद्धता पर ही कार्य का फलाफल निर्भर करता है। यदि हमारी प्रणाली ठीक न रही तो फल कभी ठीक नहीं हो सकता। पद्धति पर ध्यान देने से परिणाम आशा और अभिलाषा के अनुरूप ही होगा इसमें तनिक भी संशय नहीं। प्रणाली की विशुद्धता ही फल है। अतः हमें चाहिये कि अपना सारा ध्यान कर्म और उसकी प्रणाली पर ही रखें, उसकी पूर्ति के प्रलोभन में तनिक भी न फंसें। गीता का भी यही उपदेश है कि हमें निरन्तर अपने कर्म में लगे रहना चाहिये, फल की स्पृहा करना उसके पीछे अन्धा होना पतन की जड़ है। इसीलिये गीता का कथन है कि सब कर्मों को करते हुए भी उनसे अनासक्त रहें। आसक्ति होना ही बुरा है। संसार में हम कर्म करने के लिये आते हैं। किन्तु कर्मफल के लिये हमारे अन्दर जो स्पृहा, जो लोभ होता है वह हमारा सत्यानाश कर देता है। हम नित्य देखते हैं कि मधुमक्षिका फूलों का रस चूसने के लिये आती है किन्तु चलते समय उन फूलों के रस में उसके पर फंस जाते हैं और वह विवश हो जाती है इसका कारण उसके अन्दर मधु के प्रति आसक्ति है। उसी प्रकार हम भी इस विश्व में केवल कर्म करने के लिये आते हैं किन्तु अपनी मूर्खता से उसके फल के प्रति आसक्ति रखने के कारण संसार में ही फंस जाते हैं। फल इसका बड़ा घातक होता है। हमारी स्वतंत्रता छिन जाती है, हम गुलाम हो जाते हैं। प्रकृति से हम सब चीजें प्राप्त करना चाहते हैं, किन्तु अन्त में प्रकृति हमसे सभी चीजें छीन लेती है और हमको ठुकरा देती है।

महामंडलेश्वर डॉ. स्वामी उमाकान्तानन्द सरस्वती जी महाराज

हमारा महान शत्रु-आलस्य

अशोक गुप्ता

किसी भी कार्य की सिद्धि में आलस्य सबसे बड़ा बाधक है, उत्साह की मन्दता प्रवृत्ति में शिथिलता लाती है। हमारे बहुत से कार्य आलस्य के कारण ही सम्पन्न नहीं हो पाते। दो मिनट के कार्य के लिए आलसी व्यक्ति फिर करूंगा, कल करूंगा-करते-करते लम्बा समय यों ही बिता देता है। बहुत बार आवश्यक कार्यों का भी मौका चूक जाता है और फिर केवल पछताने के अतिरिक्त कुछ नहीं रह जाता।

हमारे जीवन का बहुत बड़ा भाग आलस्य में ही बीतता है अन्यथा उतने समय में कार्य तत्पर रहे तो कल्पना से अधिक कार्य-सिद्धि हो सकती है। इसका अनुभव हम प्रतिपल कार्य में संलग्न रहने वाले मनुष्यों के कार्य कलापों द्वारा भली-भाँति कर सकते हैं। बहुत बार हमें आश्चर्य होता है कि आखिर एक व्यक्ति इतना काम कब एवं कैसे कर लेता है। स्वर्गीय पिताजी के बराबर जब हम तीन भाई मिल कर भी कार्य नहीं कर पाते, तो उनकी कार्य क्षमता अनुभव कर हम विस्मय-विमुग्ध हो जाते हैं। जिन कार्यों को करते हुए हमें प्रात:काल 9-10 बज जाते हैं, वे हमारे सो कर उठने से पहले ही कर डालते थे।

किसी भी कार्य की सिद्धि में आलस्य सबसे बड़ा बाधक है, उत्साह की मन्दता प्रवृत्ति में शिथिलता लाती है। हमारे बहुत से कार्य आलस्य के कारण ही सम्पन्न नहीं हो पाते। दो मिनट के कार्य के लिए आलसी व्यक्ति फिर करूंगा, कल करूंगा-करते-करते लम्बा समय यों ही बिता देता है।

जब कोई काम करना हुआ, तुरन्त काम में लग गये और उसको पूर्ण करके ही उन्होंने विश्राम किया। जो काम आज हो सकता है, उसे घंटा बाद करने की मनोवृत्ति, आलस्य की निशानी है। एक-एक कार्य हाथ में लिया और करते चले गये तो बहुत से कार्य पूर्ण कर सकेंगे, पर बहुत से काम एक साथ लेने से- किसे पहले किया जाय, इसी इतस्तत: में समय बीत जाता है और एक भी काम पूरा और ठीक से नहीं हो पाता। अत: पहली बात ध्यान में रखने की यह है कि जो कार्य आज और अभी हो सकता है, उसे कल के लिए न छोड़, तत्काल कर डालिए, कहा भी है-

काल करे सो आज कर, आज करे सो अब।
पल में परलय होयगी, बहुरि करेगा कब॥

दूसरी बात ध्यान में यह रखनी है कि एक साथ अधिक कार्य हाथ में न लिये जायं, क्योंकि इससे किसी भी काम में पूरा मनोयोग एवं उत्साह नहीं रहने से सफलता नहीं मिल सकेगी। अत: एक-एक कार्य को हाथ में लिया जाय और क्रमश: सबको कर लिया जाय अन्यथा सभी कार्य अधूरे रह जायेंगे और पूरे हुए बिना कार्य का फल नहीं मिल सकता। जैन धर्म में कार्य सिद्धि में बाधा देने वाली तेरह बातों को तेरह काठियों (रुकावट डालने वाले) की संज्ञा दी गई है। उसमें सबसे पहला काठिया 'आलस्य' ही है। बहुत बार बना बनाया काम तनिक से आलस्य के कारण बिगड़ जाता है।

प्रात:काल निद्रा भंग हो जाती है, पर आलस्य के कारण हम उठकर काम में नहीं लगते। इधर-उधर उलट-पुलट करते-करते काम का समय गंवा बैठते हैं।' जो व्यक्ति उठकर काम में लग जाता है, वह हमारे उठने के पहले ही काम समाप्त कर लाभ उठा लेता है।

दिन में भी आलसी व्यक्ति विचार में ही रह जाता है, करने वाला कमाई कर लेता है। अत: प्रति समय किसी न किसी कार्य में लगे रहना चाहिए। कहावत भी है 'बैठे से बेगार भली'। निकम्मे आदमी में कुविचार ही घूमते हैं। अत: निकम्मेपन को हजार खराबियों की जड़ बतलाया गया है।

मानव जीवन बड़ा दुर्लभ होने से उसका प्रति क्षण अत्यन्त मूल्यवान है। जो समय जाता है, वापिस नहीं आता। प्रति समय आयु क्षीण हो रही है, न मालूम जीवन दीप कब बुझ जाय। अत: क्षण मात्र भी प्रमाद न करने का उपदेश भगवान महावीर ने दिया है। महात्मा गौतम गणधर को सम्बोधित करते हुए उन्होंने उत्तराध्ययन- सूत्र में 'समयं गोयम मा पमायए' आदि- बड़े सुन्दर शब्दों में उपदेश दिया है। जिसे पुन:-पुन: विचार कर प्रमाद का परिहार कर कार्य में उद्यमशील रहना परमावश्यक है। जैन दर्शन में प्रमाद निकम्मेपन के ही अर्थ में नहीं, पर समस्त पापाचरण के आसेवन के अर्थ में है। पापाचरण करके भी जीवन के बहुमूल्य समय को व्यर्थ ही न गंवाइये।

आलस्य के कारण हम अपनी शक्ति से परिचित नहीं होते-अनन्त शक्ति का अनुभव नहीं कर पाते और शक्ति का उपयोग न कर, उसे कुँठित कर देते हैं। किसी भी यन्त्र एवं औजार का आप उपयोग करते रहते हैं तो ठीक और तेज रहता है। उपयोग न करने से पड़ा-पड़ा जंग लगकर बरबाद और निकम्मा हो जाता है। उसी प्रकार अपनी शक्तियों को नष्ट न होने देकर सतेज बनाइये। आलस्य आपका महान शत्रु है। इसको प्रवेश करने का मौका ही न दीजिए एवं पास में आ जाए तो दूर हटा दीजिए। सत्कर्मों में तो आलस्य तनिक भी न करे क्योंकि 'श्रेयाँसि बहु विघ्नानि' अच्छे कामों में बहुत विघ्न जाते हैं। आलस्य करना है, तो असत् कार्यों में कीजिए, जिससे आप में सुबुद्धि उत्पन्न हो और कोई भी बुरा कार्य आप से होने ही न पावे।

❑

टूटते परिवार

टूटते परिवार आजकल एक भंयकर समस्या है। हम दो हमारे दो के नारे ने इस समस्या को अधिक बढ़ावा दिया है। जब हमारे बच्चे दो होंगे तो बच्चों को रिश्तों का क्या पता चलेगा। बुआ मामी, मासी, चाची क्या होती है। पहले हमारे सयुंक्त परिवार होते थे। बच्चों को हर रिश्तों का पता होता था। सब एक दूसरे से प्यार करते थे। एक दूसरे की भावनाओं का ध्यान रखा जाता था। सब दु:ख -सुख समान होते थे। घर में बुजुर्गों का सम्मान होता था। लेकिन आज के भौतिक युग में सारी सुविधाओं के होने से इंसान अपनी इन्सानियत से गिरता जा रहा है। पहले सब काम खुद करने पड़ते थे। आपस में मिल बांटकर करती थी। आज सब सामान बाजार से रेडीमेड मिलता है। एक दूसरे के सहयोग की आवश्यकता नहीं पड़ती आजकल स्वार्थ इतना बढ़ गया है कि हर कोई अपने बच्चों के लिए सब कुछ करना चाहता है। अगर वो ज्यादा कमाता है तो वह अलग रहना पंसद करता है। ताकि भाई के बच्चों को कुछ न देना पड़े। इन्हीं भावनाओं के कारण घर में बड़ों की उपेक्षा की जाती है। पहले घर में बड़े दाखिल होते थे तो खांस कर आते थे ताकि घर की बहु-बेटियां अपना आंचल ठीक कर ले। बहु-बेटियां भी पहले बड़ों का सम्मान करती थी। लेकिन आज की बहु-बेटियां भी पाश्चात्य के रंग में रंगी हुई हैं। इसी कारण परिवार टूटतें जा रहें हैं। माता-पिता अपने आप को उपेक्षित महसूस करतें हैं। इसीलिए उनमें तनाव बढ़ता जा रहा है। हमें सोचना चाहिए कि हम कहां जा रहें हैं। हम अपने बच्चों को विरासत में क्या दे रहें हैं। जब हम स्वंय बूढ़ों का सम्मान नहीं करेगें तो बच्चे क्या सीखेगें? बच्चे तो कच्चे घड़े होतें हैं, जैसा उन्हें बनाओगे वे तो वैसा ही बन जाएगें। हमें चाहिए कि हम परिवारों को जोड़ें ताकि बच्चों को हम विरासत में अच्छी संस्कृति दे सकें। एक स्वस्थ परिवार दें सकें।

अहंकार आने पर, दुःख आता है

□ अनिल वर्मा

रथोत्सव के समय रथ का एक पहिया टूट जाने से चिंतित श्रद्धालुओं को विकल्प स्वरूप कोई भी वाहन न मिलना एक गांव में रथोत्सव के चलते श्रद्धालु वह रथ एक गांव से दूसरे गांव में गाते बजाते ले जा रहे होते हैं। बीच रास्ते में ही रथ का एक पहिया टूट जाता है, जिससे श्रद्धालु चिंतित हो जाते हैं। रथ में विराजमान भगवान को दूसरे गांव कैसे पहुंचाएं? यह समस्या श्रद्धालुओं के सामने उत्पन्न हो जाती है। विकल्प स्वरूप श्रद्धालु बैलगाडी, घोडा गाडी ढूंढते हैं परन्तु कोई वाहन उपलब्ध नहीं होता।

श्रद्धालुओं ने मार्ग के एक गधे को सजाकर, उस पर भगवान रखकर दूसरे गांव की ओर प्रस्थान करा तथा कुछ लोगों द्वारा गधे को ही भक्ति भाव से हार डालना प्रारम्भ करा।

मार्ग में श्रद्धालुओं को कचरा खानेवाला एक गधा दिखाई दिया। सभी लोग उसे चंदन, तेल इत्यादि लगाकर नहलाते हैं, उस पर रेशमी वस्त्र डालकर उसे सजाते हैं तथा उस पर भगवान बैठाते हैं। उत्सव पुन: प्रारम्भ होता है तथा सभी लोग दूसरे गांव की ओर प्रस्थान करते हैं। कुछ श्रद्धालु गधे पर बैठे हुए भगवान को हार अर्पित करने लगते हैं। कुछ समय पश्चात भगवान को हार अर्पित करने का स्थान शेष नहीं रहता। इसलिए लोग भक्ति

भाव से गधे को ही हार पहनाने लगते हैं।

मान-सम्मान प्राप्त होने से आनन्दित गधे द्वारा उसकी पीठ पर बोझ है, ऐसा मानकर देह झटकने से भगवान नीचे गिरना तथा क्रोध से भडके हुए श्रद्धालुओं द्वारा गधे को मार पड़ना।

मार्ग से जाते हुए गधा विचार करता है कि आज तक जो कभी नहीं मिला, वह राजवैभव आज मुझे कैसे मिल रहा है? श्रद्धालु भगवान की आरती कर रहे थे परन्तु गधा यह मानने लगा कि वह आरती उसके लिए ही है, इसलिए वह अधिक प्रसन्न हो गया। कुछ समय पश्चात उसके मन में विचार आया कि मुझे यह राजवैभव स्वीकार है। परन्तु मेरी पीठ पर कुछ बोझ है। यह विचार आने पर उसने स्वयं का शरीर झटका । इसलिए उसकी पीठ पर विराजमान भगवान नीचे गिर जाते हैं। यह देखकर श्रद्धालु क्रोध से भडकते हैं तथा गधे को पीटते हैं।

तात्पर्य जब तक हम पर ईश्वर अथवा गुरु की कृपा है, हमारे निकट उनका वास है, तब तक हमें मान-सम्मान तथा समाज से प्रेम प्राप्त होता है । जिस समय अहंकार बढता है, उस समय हमारी स्थिति गधे से पृथक नहीं होती। इसलिए भगवान को भूलना नहीं चाहिए। अहं रहित रहना चाहिए। सभी मान-सम्मान भगवान के चरणों में अर्पण करना चाहिए। ❑

मृत्यु को लौटाने वाली सिद्धि का मूल्य भी आत्मज्ञान के आगे शून्य होना

चांगदेव अपनी सिद्धि के बल पर 1400 वर्ष जीवित रहे। उन्होंने मृत्यु को 42 बार लौटाया था। उन्हें प्रतिष्ठा का मोह था। उन्होंने संत ज्ञानेश्वरजी की कीर्ति सुनी। संत ज्ञानेश्वरजी का सभी स्थानों पर सम्मान हो रहा था। चांगदेवजी संत ज्ञानेश्वर से द्वेष करने लगे। चांगदेवजी को लगा कि, ज्ञानेश्वर को पत्र लिखा जाए। परंतु वे समझ न सके कि पत्र का आरंभ कैसे किया जाए। क्योंकि आरंभ में पूज्य लिखा तो ज्ञानेश्वरजी की आयु मात्र 42 वर्ष थी। यदि चिरंजीव लिखें, तो ज्ञानेश्वर महात्मा थे। क्या करें, उन्हें कुछ समझ नहीं आ रहा था। इसलिए उन्होंने पत्र कोरा ही भेज दिया। संत ही संतों की भाषा जानते हैं। संत मुक्ताबाई ने (संत ज्ञानेश्वरजी की बहन ने) पत्र का उत्तर भेजा, तुम्हारी आयु 1400 वर्ष हो गई, तब भी तुम तुम्हारे पत्र समान कोरे ही रह गए! यह पढकर चांगदेव को लगा कि, ऐसे ज्ञानी पुरुष से भेंट होनी चाहिए। चांगदेव को अपनी सिद्धि पर गर्व था। वे बाघ पर सवार होकर हाथ में सांप की लगाम पकडकर संत ज्ञानेश्वर से मिलने चल पडे। ज्ञानेश्वरजीको पता चला कि, चांगदेव मिलने आ रहे हैं। उन्हें लगा कि, उनका आदरातिथ्य उनके सामने जाकर करना चाहिए। उस समय ज्ञानेश्वरजी एक दीवार पर बैठे थे। उन्होंने दीवार को ही चलने का आदेश दिया! वह दीवार आगे बढने लगी! चांगदेव ने यह दृश्य देखा। वे जान गए कि ज्ञानेश्वर उनसे भी श्रेष्ठ हैं। क्योंकि निर्जीव वस्तुओं पर भी उनका अधिकार है! मेरा तो केवल सजीव वस्तुओं पर है। उसी क्षण चांगदेव संत ज्ञानेश्वर के शिष्य बन गए।

आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महारिपुः

महामंडलेश्वर डॉ. स्वामी उमाकान्तानन्द सरस्वती जी महाराज

किसी ने उसको आश्रय नहीं दिया। जो राम जी के साथ विरोध करता है, उसे कौन घर में रख सकता हैं? उसके पिता इन्द्र ने भी उसको संरक्षण नहीं दिया। वह जहाँ जाता था वही उसके पीछे-पीछे राम जी का छोड़ा हुआ ब्रह्मास्त्र भी जाता था। जयंत बहुत घबड़ाया। अन्त में नारद जी के कहने से वह राम जी की शरण में गया। आकर चरणों में गिर पड़ा। परन्तु भय से वह इतना अधिक व्याकुल हो रहा था कि उसे होश रहा नहीं, इस कारण उसके पैर राम जी की तरफ और मस्तक श्री सीता जी की तरफ हो गया। जयंत ने अपराध तो श्री सीता जी का किया था, फिर भी माता जी को उसके ऊपर दया आ गयी। उन्होंने कौए का मस्तक उठाकर राम जी के चरणों में रख दिया।

जयंत की शरणागति माता जी ने सिद्ध की। प्रभु को यह ठीक नहीं लगा। अपराधी को सजा देनी थी। श्री सीता जी रामचन्द्र जी को मनाने लगीं-आप इसको क्षमा कीजिए। श्री रामचन्द्र जी ने कहा-यह क्षमा करने लायक नहीं। इसका अपराध अक्षम्य है श्रीसीता जी ने कहा-यह लायक नहीं, परन्तु आप तो लायक हो। श्री सीता माँ बहुत दयालु थीं। प्रभु ने जयंत की एक आँख फोड़ दी। परमात्मा सजा तो देते है, परन्तु दया रखकर सजा करते हैं। जयंत की दोनों आँखे नहीं फोड़ा। एक ही फोड़ी। भगवान में कथा आती है कि वामन भगवान ने भी शुक्राचार्य एक ही आँख फोडी थी। वामन भगवान ने राजा बलि से तीन पग पृथ्वी माँगी। राजा बलिदान का संक्लप करने को तैयार हो गए। राजा बलि के गुरू शुक्राचार्य एकटक नजर से वामन भगवान को निहार रहे थे। वे समझ गए कि यह कोई साधारण ब्राह्मण नहीं, स्वयं परमात्मा ही हैं। देवताओ का कार्य करने के लिए वामन रूप में प्रकट हुए हैं। उन्होंने राजा बलि को सावधान करते हुए कहा-गृहस्थ को विवेक से दान देना चाहिए। ऐसा दान नहीं देना चाहिए, जिसको दिए पीछे घर के लोग दुखी हों। इसको तीन पग दोगे, तो तुम को खड़े रहने की भी जगह नहीं रहेगी। परन्तु राजा बलि नहीं माना। तब शुक्राचार्य ने दान का संकल्प कराना स्वीकार नहीं किया। इसलिए राजा बलि के कहने से वामन जी दान का संकल्प कराने लगे। उन्होंने राजा बलि से कहा-इस झाड़ी में जल पधराओ। दान का संकल्प न हो सके, इसलिए सूक्ष्मरूप में शुक्राचार्य की झाडी प्रवेश किया। वे झाड़ी की ओटो में प्रवेश कर गए। झाड़ी में से जल बाहर नहीं आया। वामन महाराज समझ गए। उन्होंने दर्भ की एक सलाई लेकर झाडी टोंटी में डाली। शुक्राचार्य की एक आँख फोड़ डाली। भगवान ने शुक्राचार्य को बोध दिया कि तुम ज्ञानी तो हो, परन्तु जगत को दो आँखों से देखते हो। इससे तुम्हारा ज्ञान बह जाता है। समता न आवे तब तक ब्रह्मज्ञान नहीं होता, और होता है तो वह टिकता नहीं। जगत को एक ही आँख से देखों। दो आँखों से भेदभाव से देखोगे तो आँख बिगड़ेगी, मन बिगड़ेगी। एक नजर से जगत को देखों तब समता हैं, दो-से देखो तब विषमता है। भाव एक समान ही रखों। क्रिया में विषमता कदाचित हो, पर भाव में विशषमता है। पर भाव में विषमता नहीं होनी चाहिए। जो दो प्रकार की आँखों से जगत को देखता है,

जो राम जी के साथ विरोध करता है, उसे कौन घर में रख सकता हैं? उसके पिता इन्द्र ने भी उसको संरक्षण नहीं दिया। वह जहाँ जाता था वही उसके पीछे-पीछे राम जी का छोड़ा हुआ ब्रह्मास्त्र भी जाता था। जंयत बहुत घबड़ाया। अन्त में नारद जी के कहने से वह राम जी की शरण में गया। आकर चरणों में गिर पड़ा। परन्तु भय से वह इतना अधिक व्याकुल हो रहा था।

उसका जीवन बिगड़ता है। यह काल है, यह गोरा है, यह जवान है, यह बुड्ढा है–जिसकी आँखों में ऐसी विषमता है, उसका मन बिगड़ता है। राम जी ने जंयत की एक ही आँख फोड़ी, उसको अंधा नहीं किया। प्रभु ज्ञान दिया कि बेटा! तू सब को ही आँख से देखने की टेव डाल। जो सबको एक आँख से देखता है, उसका जीवन मंगलमय होता है। सब को एक ही आँख से देखो। सब को एक आँख से देखना, इसका क्या तात्पर्य है ? एक ही ईश्वर सब में हैं, ऐसी दृष्टि रखकर सबको देखना। एक ही ईश्वर अनेक रूपो में क्रीड़ा करते हैं, इस प्रकार देखे उसको समता कहते हैं।

यह मेरा और यह दूसरे का–नाम का पांडवाश्चैव–ऐसा दृष्टि से मत देखो। किसी के साथ कपट न करो। यह सब भगवान के अंशस्वरूप हैं, ऐसा मानो। इस गाँव के लोग तो बहुत अच्छे दीखते हैं,पीछे कोई आता है तो स्थान न होते हुए भी उसके लिए स्थान देते हैं। कितने ही तो हाथ ऊँचा कर के बुला भी लेते हैं कि यहाँ आओ, यहाँ आओ, जगह छोड रखी है। कथा में जो दूसरो के स्थान दे देते हैं उन को ऊपर जाने पर बहुत अच्छी जगह मिलती है। परन्तु होता ऐसा है कि अपना सम्बधी आवे, तो ही स्थान देते हैं। पराया यदि कोई आवे तो पग फैलाकर बैठ जाते हैं। मनुष्य दो आँखो से जगत को देखता है। यह मेरा है, यह पराया है। एक दृष्टी से जगत को अभ्यास देखने का डालो। ज्ञानी महापुरूष एक ही दृष्टि से जगत को देखते हैं। सब से श्रीराम ही रमण करते हैं। ऐसी निष्ठा रक्खो कि मैं जिस देवता की भक्ति करता हूँ, जिस देवता की पूजा करता हूँ, वह देव मेरे घर में सिंहासन पर ही बैठा है, केवल ऐसा नहीं है। वह तो सब से विराजता है। उसी की सत्ता से इस जगत की सत्ता है। सर्वव्यापक परमात्मा का अनुभव करने वाले ही मन बिगड़ नही पाता। परमात्मा श्री रामचन्द्र जी की लीला मानव–समाज का कल्याण करने के लिए ही है। रामचन्द्र जी रावण को मारने के लिए नहीं आए। श्रीराम तो काल के भी काल हैं। रामजी

रामचन्द्र जी रावण को मारने के लिए नहीं आए। श्रीराम तो काल के भी काल हैं। रामजी के संकल्पमात्र से ही रावण नहीं रहता। रावण को मारने के लिए प्रभु प्रकट नहीं हुए थे। राम जी मानव–समाज को धर्म का शिक्षण देने के लिए प्रकट हुए हैं। मनुष्य का आचरण राम जी के जैसा होना चाहिए। श्रीराम वन में रहकर तप करते थे। बिना वन में वास किए वासना का विनाश होता नहीं।

के संकल्पमात्र से ही रावण नहीं रहता। रावण को मारने के लिए प्रभु प्रकट नहीं हुए थे। राम जी मानव–समाज को धर्म का शिक्षण देने के लिए प्रकट हुए हैं। मनुष्य का आचरण राम जी के जैसा होना चाहिए। श्रीराम वन में रहकर तप करते थे। बिना वन में वास किए वासना का विनाश होता नहीं। मनुष्य–समाज में रहकर मानव होना सरल है, परन्तु विलासी लोगाों के संग में रहकर वासना का विनाश करना अशक्त है। वासना का विनाश करने के लिए थोड़े दिन वन में रहना आवश्यक है। ग्रन्थों में ऐसा वर्णन आया है कि गृहस्थ का घर भोग–भूमि है। गृहस्थ के घर में काम के परमाणु रहते हैं। गृहस्थ के घर में पाप रहता है। गृहस्थ घर में विषमता भी करता है। विषमता किए बिना मन मानता ही नहीं। विषमता में–से ही वैर का जन्म होता है। विषमता में–से ही पाप में ही पाप उत्पन्न होता है। सब में समभाव रखने से ही मन शान्त रहता है। वासना का विनाश वन में रहकर तप करने से ही होता है। बारह मास नहीं तो बारह महीनों में कम–से–कम आधा महीना वन में रहने की आवश्यकता है। सरकार भी तो छुट्टी देती है। तुम को जब छुट्टी मिले तब गंगा–किनारे,यमुना–किनारे, श्री नर्मदा किनारे–किसी सात्विक भूमि में रहकर साधना करो। घर में भक्ति बहुत विघ्न करते है। मार्कण्डेय पुराण में रामायण की कथा है। महर्षि व्यास की ऐसी पद्धति है कि प्रत्येक पुराण में किसी भी निमित्त वे श्रीरामचरित का वर्णन करते हैं। कोई पुराण ऐसा नहीं जिसमें व्यास जी ने राम–कथा नहीं की हो।

प्रत्येक पुराण में श्रीराम कथा आती है। कहीं कुछ थोड़ा हेर–फेर भी रहता है। मार्कण्डेय पुराण में व्यासजी ने वर्णन किया है। वन में फिरते समय एक बार श्रीराम–लक्ष्मण जानकी एक क्षेत्र में प्रवेश कर रहे थे। छोटी–सी पगडंडी थी। यह ऐसी भूमि थी कि यहाँ आने के बाद लक्ष्मण जी के मन में थोड़ा कुभाव आया। लक्ष्मण जी के मन में विचार आया कि कैकेयी ने राम को वनवास दिया है, मुझे नहीं मुझे वन में भटकने की क्या आवश्यकता है। मैं राजा

का पुत्र हूँ। मैं राज–महल में रहकर सुख क्यों नहीं भोगूँ? मैं भाई के पीछे–पीछे चलता हूँ, परन्तु बड़े भाई मेरे ऊपर प्रेम कहाँ हैं? भाभी तो बैठी रहती हैं। सारा काम तो मुझे ही करना पड़ता है। इन लोगों का मेरे ऊपर तनिक भी प्रेम नहीं। इन्होंने किसी दिन मुझ से पूछा भी नहीं कि लक्ष्मण! तूने भोजन किया या नहीं? तूने निद्रा ली या नहीं? इनके पीछे मुझे वन में भटकने की क्या आवश्यकता है। लक्ष्मण जी ने मन में श्री सीता राम जी के प्रति ऐसा कुभाव आया। श्रीरामचन्द्र जी जान गए कि लक्ष्मण का मन आज थोड़ा बिगड़ा हुआ है। श्रीरामचन्द्र जी ने लक्ष्मण जी को आज्ञा का–लक्ष्मण! इस क्षेत्र की थोड़ी सी मिट्टी तो ले लो। लक्ष्मण जी ने थोड़ी मिट्टी ली, उसकी पोटली बनाकर अपने साथ रख ली। यह मिट्टी जब–जब लक्ष्मण जी के पास होती तब–तब लक्ष्मण जी के मन में बुरा विचार आया था कि रामजी की सेवा करने की मुझे क्या आवश्यक्ता है? मैं घर लौट जाऊँ अर्थात अयोध्या चला जाऊँ। वहाँ मेरी पत्नी उर्मिला है। मैं वहाँ सुख भोगूँ। राम जी के पीछे–पीछे भटकने में मुझे कोई लाभ नहीं। लक्ष्मण जी स्नान करते ही मन पवित्र हो जाता और उस समय उनके मन में ऐसा विचार आता है कि सीता–रामजी तो प्रत्यक्ष परमात्मा हैं। मुझे इसकी सेवा का लाभ मिला है। मुझे संसार का कोई सुख भोगना नहीं। मुझे अपना जीवन सफल करना हैं। मिट्टी पोटली पास होती, उस समय लक्ष्मण जी के मन में बुरा विचार आता था और जब उस मिट्टी को छोड़ देते थे, उस समय मन में पवित्र भावना जग जाती थी। तीन–चार दिन तक ऐसा होता रहा। लक्ष्मण जी को आश्चर्य हुआ। अन्त में एक दिन लक्ष्मण जी ने श्री रामचन्द्र जी से पीछा कि मुझ में यह विकार क्यों आता है? लक्ष्मण जी ने राम जी से ऐसा होने का कारण पूछा। रामचन्द्र जी ने कहा–लक्ष्मण! इसमें तुम्हारा दोष नहीं। यह मिट्टी ही उसका कारण है। यह मिट्टी तुम फेंक दो। जिस भूमि में जो प्रवृत्ति होती है, उसके परमाणु उस भूमि में और उस भूमि के वातावरण

मैं घर लौट जाऊँ अर्थात अयोध्या चला जाऊँ। वहाँ मेरी पत्नि उर्मिला है। मैं वहाँ सुख भोगूँ। राम जी के पीछे–पीछे भटकने में मुझे क्या लाभ नहीं। लक्ष्मण जी स्नान करते ही मन पवित्र हो जाता और उस समय उनके मन में ऐसा विचार आता है कि सीता–रामजी तो प्रत्यक्ष परमात्मा हैं। मुझे इसकी सेवा का लाभ मिला है।

में रहते हैं। यह जिस क्षेत्र की मिट्टी है, उस क्षेत्र में बहुत वर्ष पहले सुन्द और उपसुन्द नाम के दो राक्षस रहते थे। श्रीरामचन्द्र जी ने सुन्द–उपसुन्द की कथा सुनाई –वे दोनों सगे भाई थे। दोनों के बीच अतिशय प्रेम था। दोनों राढ़क्षसों ने उग्र तपश्चर्या की। उनके तप से ब्रह्माजी प्रसन्न हो गए। ब्रह्माजी ने कहा–वरदान माँगो। दोनो भाईयों ने माँग की कि हम को मार न सके,ऐसा वरदान दो। ब्रह्माजी ने कहा–जिसका जन्म होता है, उसको मरना तो पड़ता ही है। तुम मरने की कोई शर्त रख लो। दोनों भाईयों के बीच अतिशय प्रेम था। इस कारण दोनों ने विचार किया कि हम में कोई भी दिन विरोध तो होना नहीं, वैर भी होना नहीं हैं, इसलिए किसी भी दिन हम एक दूसरे को मारने वाले हैं नहीं। हमारे अमर होने का यही एक उपाय है। इस प्रकार मरने की बात भी रह जाएगी और कभी मरना सम्भव भी नहीं होगा। ऐसा विचार करके उन्होंनो ब्रह्माजी से वगदान माँगा कि हम को दूसरा कोई नहीं मार सके। हम दोनों भाइयों के बीच किसी दिन झगड़ा हो तो भले ही हमारा मरण होवे, परन्तु अन्य कोई भी हमको मार न सके, ऐसा वरदान दीजिए। ब्रह्माजी ने कहा–ऐसा ही होगा। तप के प्रभाव से दोनों राक्षसो की शक्ति बहुत बढ़ गयी थी। शक्ति दुरूपयोग करे वह राक्षस। शक्ति का सदुपयोग करे, वह देवता। तुम राक्षस हो या देवता हो, इस बात का तुम्हीं विचार करके निश्चय करो। प्रभु ने तुमको जो कुछ शक्ति दी है उसका तुम सदुपयोग करते हो, तो तुम देवता हो। पवित्र विचार करने के लिए प्रभु मन दिया है। मन में अदभुत शक्ति रहती है। मन जब

ईश्वर के स्वरूप में लीन होता है तब उसकी शक्ति का विकास होता है और जब मन विषयों में भटकता है। तब उसकी शक्ति विनाश होता है। ईश्वर की जीव के ऊपर अनन्त कृपा है। प्रभु जीव को शक्ति के अलावा और भी अधिक दिया है। परन्तु जीव को उसका उपयोग करना नहीं आता। सुन्द और उपसुन्द की शक्ति बहुत बढ़ गयी। तब वे इन्द्रादिक देवताओं को त्रास देने लगे। देवता ब्रह्माजी के पास गए और ब्रह्माजी से कहा कि आपने इनको वरदान दिया है, इसलिए ये किसी के हाथों मरते नहीं। इनको दूसरा कोई मार सकता नहीं। ब्रह्माजी ने युक्ति की। उन्होंने तिलोत्तमा नाम की एक अप्सरा उत्पन्न की और तिलोत्तमा से कहा–इन दोनों भाईयों से तू वैर उत्पन्न कर। सुन्द–उपसुन्द जहाँ रहते थे अप्सरा तिलोत्तमा वहाँ गयी। सुन्दरी अप्सरा को देखते ही सुन्द को ऐसा विचार हुआ कि यह मुझको मिले, उपसुन्द को भी ऐसा विचार हुआ कि यह मुझ को मिले। दोनों भाईयों में झगड़ा होने लगा। अप्सरा ने कहा–मैं तुममें–से एक के साथ लगन करने को तैयार हूँ। सुन्द उपसुन्द से कहने लगा–यह मेरी है। यह तेरी भाभी है। उपसुन्द ने कहा–यह तेरी भाभी है, यह तो मेरी है। ''मेरी, मेरी''–कहते–कहते मारामारी पर आ गए। दोनों मरण हो गया। श्रीरामचन्द्र जी ने सुन्द–उपसुन्द की कथा बताते हुए लक्ष्मण जी से कहा–इस भूमि में वैर के संस्कार आए हुए हैं। दो सगे भाई इस भूमि पर परस्पर युद्ध कर के मरे है। भूमि–का असर मन के ऊपर पर होता है। अशुद्ध भूमि भक्ति में बाधक है, शुद्ध भूमि भक्ति में साथ देती है। गृहस्थ का धर्म है कि वह बारह महीने में, अधिक नहीं तो, एक–आध महीना ही किसी पवित्र तीर्थ में रहकर साधन करे। एकान्त में रहकर कोई सत्कर्म करे, सादा भोजन करे। कितने ही लोग तीर्थ में तो जाते है परन्तु अचार और मुरव्दे की बरनियाँ भी साथ ले जाते है। जिसका भोजन सादा है, जिसका देव सादा है, वह किसी दिन भी साधु हो सकता है। बाहर महीन नहीं तो एक–आध महीना तीर्थ में रहकर

ब्रह्माजी ने युक्ति की। उन्होंने तिलोत्तमा नाम की एक अप्सरा उत्पन्न की और तिलोत्तमा से कहा–ईन दोनों भाईयों तू वैर उत्पन्न कर। सुन्द–उपसुन्द जहाँ रहते थे अप्सरा तिलोत्तमा वहाँ गयी। सुन्दरी अप्सरा को देखते ही सुन्द को ऐसा विचार हुआ कि यह मुझ को मिले, उपसुन्द को भी ऐसा विचार हुआ कि यह मुझ को मिले। दोनों भाईयों में झगड़ा होने लगा।

साधन करना बहुत आवश्यक है। राम जी ने वन में रहकर तप किया था। राम जी तो जगत को एक आदर्श बतलाते हैं। रावण को मारना हो तो तुम भी वन में तप करो। तप बिना रावण मरता नहीं। रावण शब्द का अर्थ होता है रूलाने वाला। मनुष्य को रूला ने वाला काम है। इस काम का विनाश करने के लिए वन में रहकर सात्विक जीवन व्यतीत करो। रामजी वन में रहे थे, तो अकेले नहीं रहे थे। श्रीसीता जी साथ थीं, फिर भी राम जी ने पूर्ण संयम रक्खा और तप किया। रामायण में लिखा है कि राम जी वृद्धावस्था वन में नहीं गए थे। वन का वास तो यौवन में ही होना चाहिए। वृद्धावस्था में शरीर दुर्बल होने के बाद वन में रहकर क्या कर सकोगे? वृद्धावस्था में कुछ नहीं हो सकता, शरीर रोग का घर बन जाता है। शरीर शक्ति–हीन हो जावे, इसके बाद भक्ति नहीं होती। भक्ति वही कर सकता है, जिसका शरीर सबल है–इन्द्रियों की शक्ति है। जब तक शरीररूपी घर स्वस्थ है, तब तक वृद्धावस्था का आक्रमण नहीं होता, इन्द्रियों की शक्ति क्षीण नहीं होती, तब तक चतुर पुरूषों को आत्मकल्याण के लिए प्रयत्न कर लेना चाहिए। नहीं तो पीछे, घर में आग लग जाने पर कुआँ खोदने जाने में कोई लाभ है?

शरीर दुर्बल होने के बाद देह की भक्ति ही भक्ति हो पाती है, परमात्मा की भक्ति नहीं होती। वृद्धावस्था में देह की सेवा होती है, देव

की सेवा नहीं हो सकती। श्री रामचन्द्रजी यौवन में वन में रहे थे। श्री सीता जी साथ थी। रामायण का विचार करते हुए ऐसा लगता है कि रामजी वन में पधारे, तब उन की अवस्था छब्बीस वर्ष की थी, श्री सीता माँ अठारह-उन्नीस वर्ष की थी। भरे यौवन में इनका वनवास हुआ था। यौवन में ही वनवास की आवश्यकता है। वृद्धावस्था में वन में जाने की अधिक अवश्यकता नहीं। शरीर दुर्बल होने के बाद समझदारी आती ही है। शरीर दुर्बल होने के बाद जो समझदार होता हैं, वह सच्चा समझदार नहीं। जवानी में देखने नहीं जाते तथा चतुराई की बातें लगते हैं, इस चतुराई का क्या अर्थ है?

जवानी में देखने नहीं जाते तथा चतुराई से बातें करने लगते हैं। इस चतुराई का क्या अर्थ है? इन्द्रियाँ दुर्बल होने के बाद संयम रक्खे, वह संयम सच्चा नहीं। शक्ति हो, सब प्रकार के भोग प्राप्त हुए हो फिर भी मन विषयों में न जावे, वह सच्चा संयम है। प्रभु ने दो वस्तुओं में आसक्ति रखी है, स्त्री में और धन में। इन दोनो में असक्ति रूपी मद रहता है। इन दोनों से वचना चाहिए। इन दो वस्तुओं में माया है। इन दो वस्तुओं से् मन की रक्षा करो। अनेक बार मनुष्य तन द्वारा काम का त्याग कर दे, परन्तु मन से न करे -यह दम्भ है। संसार के विषयों में मन दौड़े तो मन को समझाओं कि विषयों में विष है। अरे, संसार के विषय तो जहर से भी अधिक भयंकर हैं। जहर तो खाने पर ही मनुष्य मरता है, जहर का चिन्तन करने कोई नहीं मरता, जब कि संसार के विषयों का चिन्तन करने मात्र से ही मनुष्य का विनाश हो जाता है। खराब विचारों से मनुष्य का जितना नुकसान होता है, उतना अन्य किसी से नहीं होता। सुखी होना हो तो संयम करो। शरीर में शक्ति हो तब तक ही धीरे-धीरे संयम बढ़ाना है। मनुष्य को सब प्रकार से सुख देनेवाला संयम है। सुख मिलता है संयम से। सुख मिलता है सदाचार से। सुख मिलता है सदाचार से। सुख मिलता है अच्छे संस्कारों से सुख मिलता है संयम से। सुख मिलता है सदाचार से। सुख मिलता है प्रभु की भक्ति से। सुख मिलता है त्याग से। संयम और वैराग्य खूब बढ़ाओ। मानव को संपत्ति थोड़ा सुख मिलता है, संयम से अतिशय सुख मिलता है। सम्पत्ति से शान्ति नहीं मिलता। सम्पत्ति से तो विकार-वासना बढ़ती है। विषय-सुख के त्याग से ही विकार-वासना का धीरे-धीरे नाश होता है। एक बार त्याग करने के बाद विषय-सुख की इच्छा करो नहीं। एक बार जिस सुख का जिस विषय का त्याग कर दिया। वह सुख अथवा वह विषय भोगने की दुबारा इच्छा हो, तो वह वमन किए को खाने जैसा है। जीवन में संयम बिना दिव्यता आती नहीं। श्री रामचन्द्र जी ने जगत को दिव्य आदर्श बतलाया है। पंचवटी में रामजी रोज गोदावरी गंगा में स्नान करते, भगवान शंकर की पूजा करते त्रिकाल संध्या करते, ऋषि-मुनियों का सत्संग करते और कंद-मूल-फल का सेवन करते थे।

एक दिन रघुनाथ जी एकान्त में विराजे थे प्रभु अतिशय आनन्द में, प्रसन्न थे। उस समय लक्ष्मण जी ने आकर राम जी को प्रणाम किया। पीछे अत्यन्त विनयपूर्वक लक्ष्मण जी ने प्रभु से प्रश्न किया-महाराज! मोक्ष किसे कहते हैं? ईश्वर में और जीव में क्या भेद है? मुझे बहुत थोड़े शब्दों में इस तत्त्वज्ञान का उपदेश कीजिए। रामजी को अधिक बोलना अच्छा नहीं लगता था। रामजी अत्यन्त अल्पभाषी थे। रामजी ने बन्धन और मोक्ष स्वरूप लक्ष्मण समझया। महापुरुष इसे राम-सीता कहते है।

रामजी ने कहा-लक्ष्मण! बन्धन मन का है और मुक्ति भी मन को मिलती हैं। ईश्वर अतिरिक्त संसार में किसी भी विषय का जब मन चिन्तन करे, तब मन बन्धन में आता है।

बन्धन मन का है और मुक्ति भी मन को मिलती हैं। ईश्वर अतिरिक्त संसार में किसी भी विषय का जब मन चिन्तन करे, तब मन बन्धन में आता है। मन विषयों का चिन्तन छोड़े, तो मुक्ति जैसा आनन्द मिलता है, मन का निर्विषय वनना मुक्ति है, मन का विषयों में फंसना बन्धन है।

मन विषयों का चिन्तन छोड़े, तो मुक्ति जैसा आनन्द मिलता है, मन का निर्विषय बनना मुक्ति है, मन का विषयों में फंसना बन्धन है।

मनुष्य को मरने से पहले ही मुक्ति मिले तो मरने के बाद भी उसे मुक्ति मिलती है। जिसको मरने के पहले मुक्ति आनन्द नहीं मिला, उसे मरने के बाद भी मुक्ति नहीं मिलती। विषयों का चिन्तन करते-करते मन विषयाकार बन जाता है। मन के विषयाकार होने के बाद वे विषय सूक्ष्मरूप से मन में आते हैं। वे ही बन्धन का कारण बनते हैं। मन किसी दिन भी संसार के विषयों में मिलता नहीं। संसार के विषयों में तो मन फिरता है। मन जब मिलता है तब परमात्मा के स्वरूप में ही मिलता है। दूध में पत्थर डाल कर उबालो तो पत्थर किसी दिन भी दूध में मिलेगा नहीं। दूध में खाँड़ डालकर उसे गरम करोगे तो खाँड़ दूध में मिल जाएगी। पत्थर दूध में मिलेगा नहीं। पत्थर और दूध-ये दो विजातीय द्रव्य हैं। सजातीय ही सजातीय में मिलता है।

❑

देवताओं को फूल चढ़ाने से दूर होती हैं ये परेशानी, ग्रंथों में मिलता है ऐसा जिक्र

निर्मल पाण्डेय

हिंदू धर्म में भगवान को पुष्प या फूल चढ़ाने को विशेष महत्व दिया गया है। देवताओं को फूल चढ़ाने से दूर होती हैं ये प्रॉब्लम्स, ग्रंथों में मिलता है ऐसा जिक्र हिंदू धर्म में भगवान को पुष्प या फूल चढ़ाने को विशेष महत्व दिया गया है।

हिंदू धर्म में भगवान को पुष्प या फूल चढ़ाने को विशेष महत्व दिया गया है। देवताओं को फूल चढ़ाने से दूर होती हैं ये प्रॉब्लम्स, ग्रंथों में मिलता है ऐसा जिक्र हिंदू धर्म में भगवान को पुष्प या फूल चढ़ाने को विशेष महत्व दिया गया है। देवी-देवताओं और भगवान को आरती, व्रत, उपवास या त्योहारों पर फूल चढाएं जाते हैं। धार्मिक, अनुष्ठान, संस्कार व सामाजिक कार्यों को बिना फूलों के अधूरा समझा जाता है, लेकिन फिर भी कम ही लोग ये जानते हैं कि भगवान को फूल क्यों चढाएं जाते है। यदि आप भी इसका कारण नहीं जानते हैं तो आइए हम आपको बताते हैं क्या कहते हैं। हमारे धर्मग्रंथों में पुष्प के बारे में कहा गया है **पुण्य संवर्धानाच्चापि पापौघपरिहारत। पुष्कलार्थप्रदानार्थ पुष्पमित्यभिधीयते॥**

इसका मतलब है पुण्य को बढ़ाने, पापों को घटाने और फल को देने के कारण ही इसे पुष्प या फूल कहा जाता है। **दैवस्य मस्तकं कुर्यात्कुसुमोपहितं सदा।**

देवता का मस्तक या सिर हमेशा फूलों से सुशोभित रहना चाहिए।

पुष्पैर्देवां प्रसीदन्ति पुष्पै देवाश्च संस्थिता न रत्नैर्न सुवर्णेन न वित्तेन च भूरिणा तथा प्रसादमायाति यथा पुष्पैर्जनार्दन।

देवता लोग रत्न, सुवर्ण, भूरि, द्रव्य, व्रत, तपस्या या और किसी चीज से उतने प्रसन्न नहीं होते, जितना फूल या पुष्प चढ़ाने से होते हैं।

फूल चढ़ाने का ये है बड़ा कारण

मान्यता है कि पुष्प अर्पित करने से भगवान तुरंत ही प्रसन्न हो जाते हैं। फूलों की सुगंध से हमारे घर का वातावरण महकता रहता है, जिससे मन को शांति मिलती है। दिमाग में हमेशा सकारात्मक विचार आते हैं। नकारात्मक शक्तियों का प्रभाव घर से नष्ट हो जाता है।

ये हमें अच्छा जीवन जीने की भी प्रेरणा देते हैं। फूलों का जीवन कम अवधि का होता है, लेकिन फिर भी वे जब तक मुरझा नहीं जाते तब तक वातावरण में सुगंध फैलाते रहते हैं। इसी प्रकार हमें भी समाज में ऐसा ही स्वभाव रखना चाहिए जिससे हमारे आस-पास लोगों को सुख की प्राप्ति हो सके।

फूलों से दूर होता है वास्तु दोष

वास्तु शास्त्र के अनुसार भी घर में बगीचा होना अनिवार्य बताया गया है। घर के बाहर की वाटिका घर के कई वास्तु दोषों को समाप्त कर देती है। फूल सुगंध और सौंदर्य के प्रतीक हैं। घर के आगे ब्रह्म कमल, गुड़हल, चांदनी, मीठा नीम आदि के पौधे लगाने से हर तरह के वास्तुदोष का नाश होता है। इसके अलावा पारिजाद, मोगरा, गेंदा व सेवंती के फूलों को भी घर के आंगन में लगाना अच्छा माना गया है। इन सभी फूलों के पौधों को घर की सकारात्मक ऊर्जा बढ़ाने वाला व जीवन में खुशहाली लाने वाला माना गया है। ❑

पसंदीदा फल बताते हैं आपका व्यक्तित्व

कौशल पाण्डेय (ज्योतिष)

फल ज्योतिष के अनुसार सेब पसंद करने वाले रोग उत्साही और खुश मिजाज होते हैं। आर्थिक मामलों में यह थोड़े लापरवाह होते हैं। इनमें बचत करने की प्रवृत्ति कम होती है। इन्हें नए कपड़ों एवं संगीत का शौक होता है। ऐसे लोगों में निर्णय लेने की अच्छी क्षमता होती है। संकट के समय धैर्य से काम लेते हैं।

● सेब पसंद करने वाले लोग सूर्य से प्रभावित होते हैं, इसलिए इन्हें जितनी जल्दी गुस्सा आता है, उतनी ही जल्दी खत्म भी हो जाता है। ये जिनसे प्यार करते हैं, उसके लिए कुछ भी कुछ भी करने के लिए तैयार रहते हैं। इनके इस गुण के कारण दाम्पत्य जीवन खुशहाल होता।

● जिस व्यक्ति को आम पसंद होता है, उन्हें बहलाना आसान नहीं होता। वह जिंदादिल होते हैं और इनमें नेतृत्व की योग्यता भरपूर होती है। यह अपनी पहचान खुद बनाना पसंद करते हैं। हर कदम सोच समझकर उठाते हैं और जल्दी किसी की बातों में नहीं आते हैं। यह किसी बा को लेकर अपने मन में एक बार जो अवधारणा बना लेते हैं, उससे डिगना इन्हें कठिन होता है। अपने इस गुण के कारण ये जल्दी धोखा नहीं खाते हैं। इनका हृदय उदार होता है। जरूरतमंदों की सहायता के लिए ये सदैव तैयार रहते हैं। व्यवसायिक जीवन में यह जितने कड़क होते हैं, पारिवारिक जीवन में उतने ही नरम रहते हैं। जीवनसाथी के साथ इनका व्यवहार बच्चों के जैसा होता है।

● केला पसंद करने वाले नरम दिल होते हैं। जिसे गुरु का प्रिय केला पसंद होता है, वह नरम दिल वाले व्यक्ति होते है। ऐसे लोग काफी भावुक और धार्मिक प्रवृत्ति के होते हैं। अपने इस स्वभाव के कारण यह अक्सर धोखा खाते

हैं। कठिन परिस्थतियाँ आने पर यह जल्दी आत्मविश्वास खो देते हैं और घबरा जाते हैं, जिससे इनकी मुश्किलें और बढ़ जाती है। प्यार के मामले में काफी भाग्यशाली होते हैं। अपने जीवनसाथी की भावनाओं का सम्मान करते हैं और उन्हें पूरा सहयोग देते हैं। इनके इस स्वभाव के कारण दाम्पत्य जीवन में इन्हें अपने साथी से भी पूरा सहयोग और स्नेह मिला है।

● अंगूर जिन्हे पसंद होता है वह गर्म मिजाज के व्यक्ति होते हैं। कोई बात पसंद नहीं आने पर इन्हें जल्दी गुस्सा आ जाता है। लेकिन इनका गुस्सा अधिक समय तक नहीं रहता है। यह काफी अधिक समय तक नहीं रहता है। यह काफी जोशीले और उत्साही होते हैं। जीवन के हर पल को उत्साह के साथ जीना पसंद करते हैं। इसलिए दोस्तों के बीच लोकप्रिय रहते हैं। आपके दिल में किसी के लिए कोई गिला-शिकवा नहीं रहता है। खूबसूरती आपको आकर्षित करती है। आप सुन्दर लोगों से दोस्ती करना पसंद करते हैं। विपरीत लिंग के प्रति आपमें अधिक रूचि होती है। इसलिए दोस्तों में विपरीत लिंग वाले लोग ही अधिक होते हैं, जैसे लड़को के दोस्तों में लड़कियां ज्यादा होती है, जबकि लड़कियों के अधिक लड़के दोस्त होते हैं।

● नारियल पसंद करने वाले दिल से ज्यादा दिमाग को अहमियत देते हैं। बहुत ही बुद्धिमान और चतुर इंसान होंगे। मिलनसार स्वभाव के कारण दोस्ती का दायरा काफी बड़ा होता है। बहुत ही महत्वाकांक्षी होते हैं और हमेशा ऊंचाई पर पहुंचाने की कोशिश करते हैं। खासतौर पर नौकरी एवं व्यवसाय के क्षेत्र में खुद को दूसरों से ऊपर देखने की हसरत रखते हैं। किसी बात को करने की ठान ले तो उसे पूरा करके ही दम लेते हैं। अपने इस स्वभाव के कारण काफी तरक्की करते हैं। नारियल पसंद करने वाले लोग प्यार के मामले में दिल से ज्यादा दिमाग को अहमियत देते हैं। यह चाहते हैं कि इनका साथी अक्लमंद हो।

● संतरा पसंद करने वालो दोस्ती ईमानदारी से निभाते हैं। फ्रूट एस्ट्रोलॉजी के अनुसार अगर आपको संतरा अधिक पसंद है तो आप शर्मीले स्वभाव के हो सकते हैं। आप होशियार और अक्लमंद होंगे। कोई काम आप धैर्य और समझदारी से करते हैं। जल्दबाजी में कोई काम करके अपना नुकसान कर लेमना आपका स्वभाव नहीं होता है। आप काफी धैर्यवान और मेहनती होते है। अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिए निरंतर प्रयास करते रहना आपकी फितरत होती है। दोस्ती को ईमानदारी पूर्वक निभाते हैं और प्यार पर आपका यकीन होता है। किसी भी समस्या को बातचीत से सुलझाना आपको पसंद होता है। वाद-विवाद से जितना हो सके, आप बचने की कोशिश करते हैं। इसलिए कभी-कभी लोग दबू समझ लेते हैं।

● पपीता पसंद करने वालों को रोमांच पसंद आता है। जिन लोगों को पपीता पसंद आता है। वह बहुत ही उदार और निडर स्वभाव के होते हैं। इन पर बुध का प्रभाव अधिक रहता है। इनमें तार्किक शक्ति भरपूर होती है। इनके इस गुण के कारण विपरीत लिंग के व्यक्ति इनकी ओर आकर्षित होते हैं। पपीता पसंद करने वालो लोगों को रोमांच काफी अच्छा लगता है। नई-नई जगह देखना नये लोगों से मिलना इन्हें पसंद होता है। इनमें सोचने समझने की शक्ति गजब की होती है, साथ ही यह काफी सक्रिय भी होते हैं, जिससे सफलता की सीढ़िया चढ़ते हुए उच्च पद तक पहुँच जाते हैं। अपने दोस्तों एवं सहकर्मियों के लिए ये प्रेरणा के स्रोत होते हैं।

● अमरूद पसंद करने वाले भाग्य के धनी होते हैं। अमरूद को धनु राशि के प्रभाव में माना जाता है, जिसका स्वामी बृहस्पति ग्रह है। अमरूद पसंद करने वाले लोग बुद्धिमान होते हैं और पढ़ने-लिखने में रुचि होती है। ईश्वर के प्रति श्रद्धावान होते हैं, लेकिन किसी भी मान्यता को तर्क की कसौटी पर परखने के बाद उन पर विश्वास करते हैं। खाने-पीने के शौकीन होते हैं। जो लोग जीभ पर नियंत्रण नहीं रख पाते हैं, उन्हें मोटापे की समस्या का सामना करना पड़ता है। ब्लड प्रेशर, लीवर, डायबिटीज एवं अर्थराइट्स नामक रोग इन्हें हो सकता है। झुककर चलने की इनमें आदत होती है। अमरूद पसंद करने वाले लोग भाग्य के धनी होते हैं और राजनीतिक दांव-पेंच में भी माहिर होते हैं। बुद्धि और ज्ञान से यह अपने क्षेत्र में उच्च पद पर विराजमान हो सकते हैं। इनमें प्रबंधन की भी योग्यता होती है।

वास्तु अनुसार पेड़ लगाने के परिणाम

● कई बंगलों या मकानों में मुख्य द्वार के सामने कैक्टस के छोटे पौधे लगा देते हैं, चाँदनी बेल या मनीप्लांट लगा देते हैं, जिससे मुख्य द्वार में अवरोध पैदा हो जाता है। इस प्रकार के घर में भी बाधा का कारण बनता है। ● मुख्य द्वार के सामने तीखे या अंदर की ओर कोई नुकीली चीज हो तो वहाँ रहने वालों को कोई न कोई बाधा आती रहेगी। इसी प्रकार यदि घर के सामने बिजली का खंभा या ट्रांसफार्मर लगा हो तो आपके यहाँ अच्छी ऊर्जा आने के बजाय निगेटिव ऊर्जा आएगी, जिसके कारण उस घर में रहने वाले रोगों को मानसिक तनाव होगा। उनका स्वास्थ्य भी अच्छा नहीं रहेगा। ● पूर्व दिशा में पीपल का पेड़ नहीं होना चाहिए। अकारण भय व धन की हानि होती है। ● आग्नेय में अनार का पेड़ अति शुभ परिणाम देने वाला होता है। दक्षिण दिशा में गूलर का पेड़ शुभ रहेगा। नैऋत्य कोण में इमली का पेड़ शुभ रहता है। ● दक्षिण व नैऋत्य दिशा में जामुन और कदंब का पेड़ शुभ रहता है। उत्तर दिशा में पाकड़ का पेड़ लगाना ठीक रहेगा। ● ईशान कोण में आंवला का पेड़ अति फलदायी रहता है। ईशान-पूर्व दिशा में शुभ रहता है। इस प्रकार हम पेड़ लगाकर शुभाशु फल प्राप्त कर सकते हैं। ● मुख्य द्वार के सामने कोई रास्ता द्वार की ओर जा रहा हो, तब भी बाधा का कारण बनता है। ग्रह स्वामी की अकाल मृत्यु हो सकती है। घर के सामने वृक्ष बड़ा रहे तो वहाँ रहने वालों की प्रगति में बाधआ का कारण बनता है। यदि उस वृक्ष की छाँव घर पर पड़ती हो तो नुकसानप्रद रहता है। जबकि उसकी छाया कहीं से भी मकान पर नहीं पड़ती हो तो हानि नहीं होगी। कई जगह बंगलों में या घरों के सामने लंबे अशोक वृक्ष लगा दिए जाते हैं, जिससे घर में आड़ सी हो जाती है। यहाँ भी घर में रहने वालों की प्रगति के मार्ग में बाधा का कारण बनता है। जहाँ तक हो सके मुख्य द्वार को बाधा से रहित ही रखना चाहिए। ❑

भगिनी निवेदिता भारत के उत्थान कार्य हेतु सर्वस्व का त्याग करने वाली विवेकानंद शिष्या!

स्वामी उमाकान्ता नन्द जी महाराज

भगिनी निवेदिताभगिनी निवेदिता वर्ष 1898 में भारत में आई तथा आयु के 44 वे वर्ष में उन्होंने इस जगत का त्याग किया। पारतंत्र के राजनेताओं द्वारा उन्हें कोई भी राज-सम्मान प्राप्त नहीं हुआ। किंतु जन सामान्यों द्वारा उनका 'विवेकानंद कन्या' इस विशेषण से सम्मान किया गया। भारत की संस्कृति सूक्ष्मरूप से ज्ञात करने के लिए समर्पित हुए एक विदेशी महिला का इससे बडा सम्मान क्या होगा? निवेदिता का यह समर्पण दधिची ऋषि के वड्का के समान एवं नवविधा भक्ति के समर्पण भक्ति के समान था। निवेदिता के त्याग में भारत के उत्थान का जो स्फुल्लिंग था, वहीं आज नए रुप से प्रज्वलित करने की आवश्यकता है।

ईसाई तथा बुद्ध पंथ एवं विज्ञान का अभ्यास करने के पश्चात् भी संदेहावस्था का रहना!

भगिनी निवेदिता का मूल नाम था मार्गरेट एलिजाबेथ नोबेल। लेखक तथा अध्यापक होने वाली मार्गरेट ने लंडन में सामाजिक कार्य करने के साथ-साथ ईसाई पंथ का भी अभ्यास आरंभ किया था। किंतु उन्हें इस पंथ के विचारों में विरोधाभास एवं त्रुटियां सामने आई। विज्ञान के अभ्यास से उसके मन के सभी संदेह दूर होंगे, ऐसे प्रतीत होने के कारण उन्होंने विज्ञान का अभ्यास किया। किंतु उसमें भी उसका पूरी तरह से समाधान नहीं हुआ। उसने बुद्ध पंथ का भी अभ्यास किया। विंहतु समाधान नहीं हुआ।

मन के सभी संदेहों का समाधान करनेवाले स्वामी विवेकानंद से भेंट!

वर्ष 1895 में स्वामी विवेकानंद लंडन में व्याख्यान हेतु आए थे। वहां लेडी इझाबेल मार्गेसन के घर में मार्गरेट की स्वामीजी से प्रथम भेंट हुई। तत्पश्चात् उसने स्वामीजी के अनेक व्याख्यान सुनें। प्रत्यक्ष भेंट में उनके साथ अनेक विषयों पर विचार-विमर्श किया। स्वामीजी का उदात्त दृष्टिकोण, वीरोचित आचरण तथा स्नेहाकर्षण का उस पर प्रभाव हुआ। मार्गरेट के मन में यह विश्वास उत्पन्न हुआ कि जिस सत्य की खोज में वह थी, उस सत्य के निकट जाने का मार्ग स्वामीजी द्वारा ही प्राप्त होगा तथा तीन वर्ष के पश्चात् उसने भारत में प्रस्थान किया।

मार्गरेट से निवेदिता!

मार्गरेट की मां मेरी नोबेल ने लडकी का नाम रखा था, मार्गरेट अर्थात् ईश्वरी कार्य को समर्पित हुई। स्वामी विवेकानंद के मार्गदर्शन से प्रभावित हुई मार्गरेट भारत में आई। तदुपरांत उसने स्वामी विवेकानंद से ब्रह्मचारिणी की दीक्षा प्राप्त की। उस समय उसका संजोग से नया नामकरण हुआ, निवेदिता अर्थात् समर्पिता! इस दीक्षा के पश्चात् स्वामीजी ने उन्हें शिव भक्ति का पहला पाठ पढाया! तदनंतर आशीर्वाद देकर स्वामीजी ने बताया, जिन्होंने बुद्धत्व प्राप्त करने के लिए 500 बार जन कल्याणार्थ स्वयं का समर्पण किया था, उनके पास जाओ एवं उनका अनुसरण करें।

भारतीय संस्कृति आत्मसात कर स्वामी विवेकानंद की कसौटीको पात्र हुई निवेदिता!

ब्रह्मचारिणी दीक्षा से पूर्व स्वामीजी ने निवेदिता से बताया कि, तुम्हें अंतर्बाह्य हिन्दू होना चाहिए ऐहिक आवश्यकता, विचारधारा तथा स्वभाव का भी हिन्दूकरण करना ही चाहिए। उसके लिए तुम्हें अपना भूतकाल, उसकी प्रत्येक घटना का विस्मरण होना चाहिए। अर्थात् पूरी तरह से विस्मृति! कितना भी कठिन हो, अपितु भारतीय विचार पद्धती से ही साधना एवं आदर्शों का आंकलन करना चाहिए, यह स्वामीजी का आग्रह था। किंतु उनके इस कसौटी में भी वह पूरी तरह से सफल हुई।

समाज, राष्ट्र एवं धर्म के लिए अत्यल्प कालावधी में आकाश के समान महान कार्य करनेवाली निवेदिता!

भगिनी निवेदिता को साधारण बातों को भी सकारात्मक दृष्टि से देखने की अद्वितीय कला अवगत थी। केवल 12-13 वर्ष के अत्यल्प कालावधी में उन्होंने आकाश के समान महान कार्य किया। निवेदिता के कार्य की ओर पृथक दृष्टि से देखने के पश्चात् यह प्रतीत होता है कि, प्रत्येक दृष्टि में उन्होंने हर बार नए रूप से समर्पण किया था।

समाज कार्य-प्लेग की साथी में रुग्णों की सेवा करना, नई पाठशाला आरंभ करना तथा उसके लिए परदेश से व्याख्यान द्वारा धन इकट्ठा करना, जगदीशचंद्र बसु के समान शास्त्रज्ञ के संशोधन पर टिप्पणी द्वारा हस्त लिखित सिद्ध करना, विज्ञान मंदिर की स्थापना हेतु परिश्रम करना, इनके समान पृथक उपक्रमों द्वारा निवेदिता ने समाज सेवा के साथ-साथ सभी को दिशा दर्शाने का भी कार्य किया।

राष्ट्र एवं धर्म कार्य-दीक्षा प्राप्त होने के पश्चात् भगिनी निवेदिता भारत की जीवन पद्धति, भाषा एवं हिन्दू धर्म के साथ पूरी तरह से समरस हुई। इन सारी बातों का गर्व से उन्होंने स्वदेशी वस्तुओं का वाहन द्वारा विक्रय किया। स्वामीजी के महानिर्वाण के पश्चात् उन्होंने उत्तिष्ठत जाग्रत यह संदेश स्मरण कर उनका ही कार्य पूरे करने के लिए पूरी तरह से स्वयं को इस राष्ट्र कार्य में समर्पित किया। हिन्दुस्तान में स्वामीजी का संदेश बताने के लिए उन्होंने यात्रा भी की। साहित्य एवं कला क्षेत्र में भी निवेदिता ने अपना प्रभुत्व सिद्ध किया।

क्रांतिकार्य-क्रांति कार्य के समय भी भगिनी निवेदिता एक कदम भी पीछे नहीं हटी। निवेदिता कहती थी कि, स्वतंत्रता यह भारत की प्रथम आवश्यकता है। क्रांतिकारकों को प्रेरित करना, स्वतंत्रता के आंदोलन में प्रत्यक्ष सम्मिलित होने के लिए रामकृष्ण मठ से दूर जाना, लॉर्ड कर्जन को पराभूत करने का साहस एवं बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन करना, स्वामीजी के छोटे बंधु क्रांतिकारक भूपेंद्रनाथ के कडवे लेख के कारण उन पर प्रविष्ट किए गए राजद्रोह के परिवाद से उनकी जमानत पर मुक्त करने हेतु स्वयं के कुछ सहस्त्र रुपए न्यायालय में इकट्ठा करना, इस प्रकार अनेक कृतियों द्वारा उनका क्रांतिकार्य स्पष्ट होता है। ❑

भगिनी निवेदिता को साधारण बातों को भी सकारात्मक दृष्टि से देखने की अद्वितीय कला अवगत थी। केवल 12-13 वर्ष के अत्यल्प कालावधी में उन्होंने आकाश के समान महान कार्य किया। निवेदिता के कार्य की ओर पृथक दृष्टि से देखने के पश्चात् यह प्रतीत होता है कि, प्रत्येक दृष्टि में उन्होंने हर बार नए रूप से समर्पण किया था।

कम लोगों को पता है भारत के तीसरे राष्ट्रपति की यह बात

हाजिरजवाबी देखकर शिक्षक महोदय का गुस्सा मुस्कराहट में बदल गया। डॉ. जाकिर हुसैन भारत के तीसरे राष्ट्रपति थे जिनका कार्यकाल 13 मई 1967 से 3 मई 1968 तक था। यह बात उनके राष्ट्रपति बनने के पहले की है। जब वह विशेष अध्ययन के लिए जर्मनी गए हुए थे। वहां कोई भी अनजान व्यक्ति दूसरे अनजान को देखकर अपना नाम बताते हुए हाथ आगे बढ़ा देता था। इस प्रकार अपरिचित लोग भी एक दूसरे के दोस्त बन जाते थे। दोस्ती करने का यह रिवाज वहां काफी प्रचलित था। एक दिन जाकिर हुसैन कॉलेज में वार्षिकोत्सव मनाया जा रहा था। कार्यक्रम का समय हो चुका था। सभी विद्यार्थी व शिक्षक वार्षिकोत्सव के लिए निर्धारित स्थल पर पहुंच रहे थे। जाकिर साहब भी जल्दी-जल्दी वहां जाने के लिए अपने कदम बढ़ा रहे थे। जैसे ही उन्होंने कॉलेज में प्रवेश किया, एक शिक्षक महोदय भी वहां पहुंचे। दोनों ही जल्दबाजी और अनजाने में एक-दूसरे से टकरा गए। शिक्षक महोदय जाकिर साहब से टक्कर होने पर गुस्से से उन्हें देखते हुए बोले, 'इडियट।' यह सुनकर जाकिर साहब ने फौरन अपना हाथ आगे की ओर बढ़ाया और बोले, 'जाकिर हुसैन। भारत से यहां पढ़ने के लिए आया हुआ हूं।' जाकिर साहब की हाजिरजवाबी देखकर शिक्षक महोदय का गुस्सा मुस्कराहट में बदल गया। वह बोले, 'बहुत खूब। आपकी हाजिरजवाबी ने मुझे प्रभावित कर दिया। इस तरह परिचय देकर आपने हमारे देश के रिवाज को भी मान दिया है और साथ ही मुझे मेरी गलती का अहसास भी करा दिया है। वाकई हम अनजाने में एक-दूसरे से टकराए थे। ऐसे में मुझे क्षमा मांगनी चाहिए थी। अपशब्द नहीं बोलने चाहिए थे।'

जीव हत्या वर्जना के बावजूद मृग, व्याघ्र, सिंह चर्म ग्राह्य क्यों?

कौशल पाण्डेय

यह सत्य है कि शास्त्रों ने जीव-हिंसा का निषेध किया है परन्तु इनके चर्मो को महत्वपूर्ण बताया है। **यजुर्वेद में** कहा गया है कि-

कृष्णाजिनं वैसुकृतस्य योनिः।

अर्थात् काला मृगचर्म सभी प्रकार के पुण्यों का जनक कहा गया है। वस्तु वैचित्र्यवाद में कहा गया है कि मृग चर्म प्रकृति से ही शुचि पदार्थों में गणनीय है।

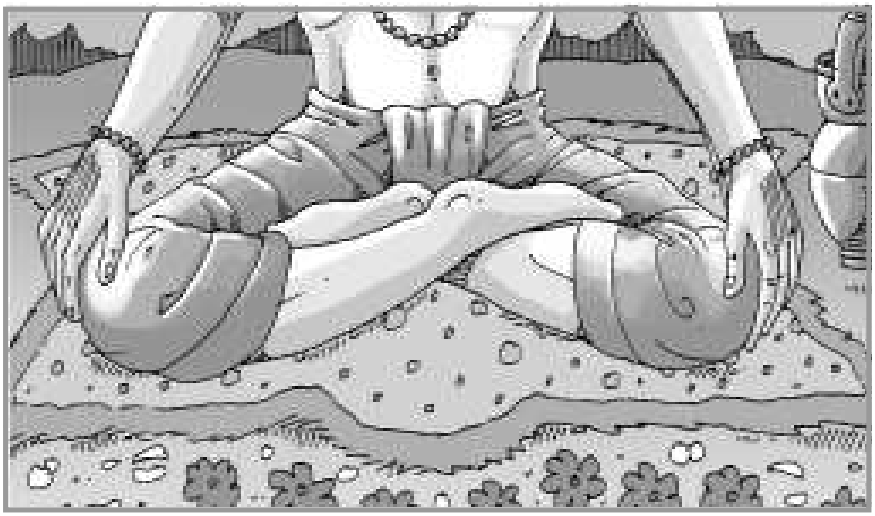

मृगचर्म में ऐसे विद्युत का प्रवाह पाया जाता है, जिससे उस पर बैठने वाले की कामेन्द्रिय शान्त होकर उसके अनुष्ठान में बाधा नहीं आती। अतः ब्रह्मचारी, योगी, संन्यासी मृगमर्च के आसन पर विराजते थे। मृगचर्म का औषधीय महत्त्व भी बहुत अधिक है।

आयुर्वेद के अनुसार मृगचर्म पर बैठने से अर्श (बवासीर) एवं भगन्दर जैसे भयंकर रोग शान्त हो जाते हैं। अण्डकोषों की वृद्धि नहीं होती। यदि आजीवन इसके आसन का प्रयोग किया जाए तो यह रोग कभी उत्पन्न ही नहीं होंगे। मृगचर्म सत्व गुणावेशित होता है। व्याघ्र एवं सिंह के चर्म रजस् गुण सम्पन्न होते हैं। उनके चर्मासनों पर बैठने से साधक में तेज, बल, पराक्रम बढ़ता है।

यही कारण है कि भारत में राजा लोग राज्याभिषेक से लेकर सदैव मृग चर्मासन, सिंह या व्याघ्र चर्मासन पर बैठते थे। व्याघ्र एवं सिंह के आसन के निकट सांप, विषैले, कीड़े, बिच्छू आदि जीव नहीं आते। इसलिए ऐसे आसन पर बैठकर समाधि लगाना उपयुक्त रहता है।

❑

गुरु जी का महत्व

मैंने एक आदमी से पूछा कि गुरू जी कौन है! वो सेब खा रहा था, उसने एक सेब मेरे हांथ में देकर मुझसे पूछा इसमें कितने बीज हैं बता सकते हो? सेब काटकर मैंने गिनकर कहा तीन बीज हैं! उसने एक बीज अपने हाथ में लिया और फिर पूछा-इस बीज में कितने सेब हैं यह भी सोचकर बताओ? मैं सोचने लगा एक बीज से एक पेड़, एक पेड़ से अनेक सेब अनेक सेवों में फिर तीन-तीन बीज हर बीज से फिर एक-एक पेड़ और यह अनवरत क्रम! वो मुस्कुराते हुए बोले-बस इसी तरह गुरु की कृपा हमें प्राप्त होती रहती है! बस हमें उसकी भक्ति का एक बीज अपने मन में लगा लेने की जरूरत है! गुरू एक तेज है, जिनके आते ही, सारे संशय के अंधकार खतम हो जाते हैं! गुरू वो मृदंग है, जिसके बजते ही अनाहद नाद सुनने शुरू हो जाते है! गुरू वो ज्ञान हैं, जिसके मिलते ही भय समाप्त हो जाता है। गुरू वो दीक्षा है, जो सही मायने में मिलती है तो भवसागर पार हो जाते है! गुरू वो नदी है, जो निरंतर हमारे प्राण से बहती हैं! गुरू वो सत् चित् आनंद है, जो हमें हमारी पहचान देता है! गुरू वो बांसुरी है, जिसके बजते ही मन और शरीर आनंद अनुभव करता है! गुरू वो अमृत है, जिसे पीकर कोई कभी प्यासा नही रहता है! गुरू वो कृपा है, जो सिर्फ कुछ सद शिष्यों को विशेष रूप में मिलती है और कुछ पाकर भी समझ नही पाते हैं! 'गुरू' वो खजाना है, जो अनमोल है! गुरू वो प्रसाद है, जिसके भाग्य में हो उसे कभी कुछ भी मांगने की जरूरत नही पड़ती हैं।

❑

हिटलर के इन बातों की रोचक जानकरी

साभार

हिटलर को तो हम सब जानते हैं। जिसने पूरी दुनिया को हिला कर रख दिया था। दोस्तों, लेकिन उनके जीवन में भी कुछ रोचक बातें होंगी जो हमें आज तक नहीं पता और वो बातें हमें हिटलर को और भी करीब से जानने में मदद करेंगी तो आईये जानते हैं हिटलर की जिंदगी के बारे में कुछ रोचक बातें जिन्हें जानकर आप हैरान रह जाओंगे।

1. हिटलर को 1 से ज्यादा बार आर्ट स्कूल से निकाला गया था।

हम सभी जानते है की आर्ट में हिटलर को असफलता मिलने के बाद ही उनका जीवन सामवाद विरोधी मतों में गया लेकिन शायद आपको यह नही पता होंगा की हिटलर ने 2 बार एक आर्ट स्कूल में आवेदन पत्र भी किया था और स्कूल ने उनके आवेदन को अस्वीकार कर दिया था और उन्हें प्रवेश परीक्षा में भी नहीं बैठने दिया गया था। आज भी आर्ट विशेषज्ञों का मानना है की हिटलर एक बेहतरीन आर्टिस्ट था।

2. हिटलर को डिज्नी से बहुत प्यार था।

जितनी जल्दी हम हिटलर को समझना छोड़ दे उतना ही हमारे लिये बेहतर होंगा। हमारे लिये डिज्नी का अर्थ बच्चो की फिल्म से होता है जबकि एक तानाशाह के लिये इसका अर्थ तंज्ञान से था। तानाशाह हिटलर के अनुसार 1937 से ही डिज्नी एनीमेशन की दुनिया में प्रभावशाली कार्य कर रही थी। हिटलर को डिज्नी देखने का बहुत शौक था।

3. हिटलर खुद की ही फोटो लेकर भाषण देने का अभ्यास करते और भाषण बनाते भी थे।

हिटलर को अपनी फोटो का काफी जूनून था। उनकी फोटो लेने के लिये उनका एक फोटोग्राफर हेंरीच होफ्फमन भी था। भाषण देते समय या बनाते समय हेंरीच ही उनकी फोटो खींचता था। ताकि हिटलर जान सके की भाषण बनाते या देते समय वह कैसा दिखता है।

4. हिटलर नियंत्रण में ना आने वाला अपव्ययी था।

आत्मकथाकार वोल्कर उल्ल्रीच ने हाल ही में इस बात को सबके सामने लाया की हिटलर अपने ऐशो-आराम और रईसी पर हजारो रुपये खर्च करता था। जबकि हिटलर को लोगों का इंसान कहा जाता था।

5. हिटलर ने एक बार अपनी मूँछ की छटाई करने का आदेश दिया था।

शायद ही हमने कभी हिटलर को बिना मूछों के देखा होंगा। हिटलर को मूछों का काफी शौक था। हिटलर बार-बार अपनी मुछो में मनचाहे बदलाव करते रहते थे। लेकिन दुर्भाग्यवश प्रथम विश्व युद्ध में सर्विस करते समय उन्होंने अपनी मूँछ की छटाई करने का आदेश दे दिया था।

6. हिटलर आइकोनिक जर्मन आर्टिस्ट को बहुत चाहते थे।

क्लासिकल जर्मन आर्टिस्ट के प्रति हिटलर के आकर्षण को हम उनके कार्यो में ही देख सकते है। इसीलिए हम आसानी से हिटलर के चित्र और पेंटर हँस थोमा के चित्र के बीच एक समांतर रेखा खिंच सकते है। हिटलर के दूसरे पसंदीदा आर्टिस्ट में अल्ब्रेक्ट डूरेर, लुकास क्रेनाच दी एल्डर और जोहंनेस वेर्मीर शामिल है।

7. अफवाह यह भी है की हिटलर के पास बोलने वाले कुत्तों की एक फौज थी।

डॉ. जन बोंड़ेसों के अनुसार हिटलर और उनके कादार सेवक पूरी तरह से ''पढ़ाकू'' कुत्तों से घिरे थे जिनके साथ वे बातचीत करते थे। जब भी कोई एक कुत्ता भौकता था तब ऐसा माना जाता था की वह युद्ध को जितने में उनकी सहायता करेगा। इस बात से यह अंदाजा लगाया जा सकता है की हिटलर अपने कुत्तो से काफी हद तक जुड़ा हुआ था। जिनमें मुख्य ब्लोंडी और बेल्ला थे। खुद को मारने से पहले हिटलर ने अपने कुत्तों की हत्या की थी।

8. हिटलर शाकाहारी था जो हमेशा खाने का स्वाद लेते रहता।

मजाकिया तौर पे हम कह सकते है की हिटलर एक पागल इंसान था। बहुत पागल, बल्कि हिटलर ने खाने का स्वाद चखने वालो को नौकरी भी दे रखी थी, हिटलर को जर्मन शाकाहारी खाना बहुत पसंद था। हिटलर को चॉकलेट बहुत पसंद थी और वह एक दिन में कम से कम एक किलो चॉकलेट जरुर खा जाता थे। हिटलर चार्ली चैपलिन का बहुत बड़ा प्रशंसक था. चार्ली चौपलिन की मूछे उसे भा गयी थी और इसलिए हिटलर भी उन्हीं की तरह मूछे रखने लगा था, हिटलर की मूछों को ''टूथब्रश मूछे'' कहा जाता था। इसके साथ ही हिटलर एक प्रभावशाली वक्ता भी था। जब भी हिटलर भाषण देता था तब लोग अपना सुध-बुध भूल जाते थे। ❑

दाल रोटी

घर बचाओ-देश बचाओ

- एटम बम से भी ज्यादा खतरनाक तीन चीजें हैं, टूथब्रश, फ्रिज और टेलीविजन। टूथब्रश रोज गरम पानी में आधा घंटा रख कर कीटाणुरहित करने के बाद ही उपयोग में लाएं।
- इस भ्रम में मत रहिए कि टूथपेस्ट से दांत साफ होते हैं। निरोगी काया की पहली सीढ़ी है–उंगली से मंजन। देसी नमक में सरसों के तेल की दो बूंदें मिलाकर या अपने पसंदीदा मंजन का उपयोग करें। बच्चों में भी यही आदत डालिए।
- फ्रिज में रखने से फलों और सब्जियों का सत्व नष्ट हो जाता है। बीमार पड़ने का मन करे तो फ्रिज का ठंडा पानी पीएं।
- आप दातून करने में पांच मिनट, नहाने में दस मिनट और भोजन करने में पन्द्रह मिनट से ज्यादा समय नहीं लेते हैं, तो टेलीविजन देखने के लिए भी अपने अनमोल समय का बजट तय करें। ज्यादा से ज्यादा एक घंटा टीवी देखें। अश्लील म्यूजिक चैनल और फैशन शो को लॉक कर दें।
- आज अमेरिका की सबसे गंभीर समस्या बच्चों का मोटापा है। चॉकलेट में कीड़े, सॉफ्ट ड्रिंक्स में कीटनाशक और फास्टफूड में केमिकल होते हैं। इन चीजों से बच्चों को सौ मील दूर रखिए। चोर एक बार घर में घुस जाए, तो नुकसान थोड़ा–सा होगा लेकिन बर्गर, पीजा और नुडल्स घुस गए, तो आपके घर को तबाही से कोई नहीं बचा सकता। बच्चों को चाहिए माता–पिता का समय, किताबें, संगीत और खेलकूद। गैर–जरूरी ट्यूशन और क्लासेस नहीं।
- घर के बाहर तख्ती लगवाएं–शराब, शेयर, मार्किट और ड्रग्स का प्रवेश वर्जित है।
- कोशिश करें कि मोबाइल और कंप्यूटर आपसे दूर रहें। आप आतंकवादियों के हमले से बच सकते हैं, इनके रेडियेशन से होने वाले विनाश से नहीं।
- घर बैठे देश की सेवा करें–विदेशी सामानों का बहिष्कार करें। देश का पैसा देश में रहेगा, तो आपका परिवार समृद्ध बनेगा। इसे गायत्री मंत्र या नवकार मंत्र की तरह याद रखें।
- टेलीविजन के झूठे विज्ञापनों को देखकर कोई सामन न खरीदें।
- अंग्रेजी में प्रसिद्ध कहावत है–Test Medicine is to avoid Medicine, स्वस्थ रहना हो तो अंग्रेजी दवाइयों से दूर रहिए। दवा लेने से पहले अपने डॉक्टर से उसके साइड इफैक्ट्स के बारे में जरूर पूछ लीजिए। बेहद जरूर हो तो ही Medical Test करवाएं।
- घर में बच्चों से अपनी मातृभाषा में ही बात कीजिए।
- विदेशी कंपनियों के विज्ञापन करने वाले अभिनेताओं और अभिनेत्रियों की फिल्मों और सीरियलों के बहिष्कार से वैसा ही संतोष प्राप्त होगा जैसा दान देने से मिलता है।
- क्रिकेट से देश का गौरव बढ़ता हो तो हमें रोज क्रिकेट खेलना चाहिए और 365 दिन खेलना चाहिए। क्रिकेट पर आज विदेशी कंपनियों और सटोरियों का टोटल कंट्रोल है। क्रिकेट आपके जीवन में सिर्फ तनाव और हीन–भावना पैदा करता है। यह टाइम पास या मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि आपको मानसिक रूप से गुलाम बनाने का साधन है।
- 'हलो,' 'हाय' और 'बॉय' से छुटकारा पाइए। फोन पर या किसी को संबोधित करते समय नमस्कार, वंदे मातरम या हां जी बोलने का आनंद उठाइए। आप धार्मिक व्यक्ति हैं तो जय–जिनेन्द्र, वाहे गुरु, इंशा अल्ला, राम–राम सा, जय रामजी की, जय श्रीकृष्ण, जय श्रीराम या राधे–राधे, हरि ओम, बोलिए।
- केक काटना, मोमबत्तियां, बुझाना, ग्रिटिंग भेजना या गुलदस्ते उपहार में देना–भाई मेरे, इन्हें हमेशा के लिए अलविदा कह देना!
- भोजन करते समय टीवी न देखें। भोजन करने के आधा घंटा बाद पानी पीएं।
- मानसिक और पारिवारिक शांति छीन लेने वाली विदेशी कंपनियों की नौकरियों से बेहतर है स्वरोजगार।
- नींद न आए तो भी दस बजे सोने चले जाएं। सुब जल्दी जागें। छुट्टियों में किसी होटलया रिसोर्ट की जगह तीर्थ यात्रा या अपने गांव जाने का कार्यक्रम बनायें।
- जीवन में माता–पिता का स्थान अद्वितीय है। वे जितना देते हैं उसका दस प्रतिशत तो वापस जरूर करें।

❐

ब्याही बिटिया की चिट्ठी

मीनाक्षी यादव

अभी-अभी आई है ब्याही बिटिया की चिट्ठी।
नयनों में ले आई है बूंदों की सौगातें।
बिदा जब हुई थी लाडो, बरसी थी जज्बातों की बरसातें।
पाला था बछिया को बड़े जतन से और मन से।
राजकुमार खरीदा था खुद भिखमंगा बन के॥
सुबक रही थी दहाड़े ले ले, याद कर वो सारी की सारी बातें,
वों सारी मीठी यादें वो मां की गोद, वो बाबुल के आंगन की बरसातें।
अरमानों को तिल-तिल दिल में दबाती जाती।
क्यूं बाबुल का आंगन छोड़ जाती है क्यूं व पराया धन कहलाती है।
दो घरों की बनाने को बना देतें है लाडला की ही आईना।
तड़प रही पिंजरें में मैना पंख फड़फड़ाती । मिलने को गैया से बछिया रंभाती।

रोते क्यों हो?

म.म. उमाकान्तानन्द सरस्वती जी महाराज

☞ तुम उदास क्यों हो? इसलिए कि तुम गरीब हो। तुम्हारे पास रुपया नहीं है।

☞ इसलिए कि तुम्हारी ख्वाहिशें दिल ही दिल में घुटकर रह जाती हैं।

☞ इसलिए कि दिली हसरतों को पूरा करने के लिए तुम्हारे पास दौलत नहीं है।

☞ मगर क्या तुम नहीं देखते कि गुलाब का फूल कैसा मुस्करा रहा है।

☞ हालाँकि उसके पास भी धन नहीं है। वह भी तुम्हारी तरह गरीब है। क्या तुम नहीं देखते कि बाग में बुलबुल कैसी चहचहा रही है। हालाँकि उसके पास भी तुम्हारी तरह एक कौड़ी भी नहीं है।

☞ इसलिए कि तुम दुनिया में अकेले हो, मगर क्या तुम नहीं देखते कि घास का सर सब्ज तिनका मैदान में अकेला खड़ा है लेकिन वह कभी सर्द आहें नहीं भरता-किसी से शिकायत नहीं करता, बल्कि जिस उद्देश्य को पूरा करने के लिए परमात्मा ने उसे पैदा किया है। वह उसी को पूरा करने में लगा है।

☞ क्या तुम इसलिए रोते हो कि तुम्हारा अजीज बेटा या प्यारी बीबी तुमसे जुदा हो गयी? मगर क्या तुमने इस बात पर भी कभी गौर किया है कि तुम्हारी जिन्दगी का सुतहला हिस्सा वह था जब कि तुम 'बच्चे' थे। न तुम्हारे कोई चाँद सा बेटा था और न अप्सराओं को मात करने वाली कोई बीबी ही थी, उस वक्त तुम स्वयं बादशाह थे।

☞ क्या तुमने नहीं पढ़ा कि बुद्ध देव के जब पुत्र हुआ, तो उन्होंने एक ठंडी साँस ली और कहा-'आज एक बंधन और बढ़ गया।' वे उसी रात अपनी बीबी और बच्चे को छोड़कर जंगल की ओर चल दिये।

☞ याद रखो जिस चीज के आने पर खुशी होती है, उस चीज के जाने पर तुम्हें जरूर रंज होगा। अगर तुम अपनी ऐसी जिन्दगी बना लो कि न तुमको किसी के आने पर खुशी हो, तो तुमको किसी के जाने पर रंज भी न होगा। यही खुशी हासिल करने की कुँजी है। विद्वानों का कथन है।

☞ जो मनुष्य अपने आपको सब में और सबको अपने आप में देखता है, उसको न आने की खुशी, न जाने का रंज होता है।

☞ अगर तुम घास के तिनके की तरह केवल अपना कर्त्तव्य पूरा करते रहो-माने तूफान में हवा के साथ मिलकर झोंके खाओ, माने वक्त मुसीबत भी खुशी से झूमते रहो।

☞ बरसात के वक्त अपने बाजू फैलाकर आसमान को दुआएं दो। गरीब घसियारे के लिए अपने नाजुक बदन को कलम कराने के लिए तैयार रहो।

☞ बेजुबान जानवरों को-भूख से तड़पते हुए गरीब पशुओं को अपनी जात से खाना पहुँचाओ तो मैं यकीन दिलाता हूँ कि तुम्हें कभी रंज न होगा कभी तकलीफ न होगी। सुबह उठने पर शबनम (ओंस) तुम्हारा मुँह धुलायेगी। जमीन तुम्हारे लिए खाने का प्रबन्ध कर देगी। तुम हमेशा हरे-भरे रहोगे। जमाना तुम्हें देखकर खुश होगा, बल्कि तुम्हारे न रहने पर या मुरझा जाने पर दुनिया तुम्हारे लिए मातम करेगी।

☞ वह बेवकफू है। जो दुनिया और दुनिया की चीजों के लिए रोता है हालाँकि वह जानता है कि इन दोनों में से न मैं किसी चीज को अपने साथ लाया था और न किसी चीज को अपने साथ ले जाऊँगा। ❑

भाव-संवेदना का विकास करना ही साधुता है

डॉ. अनिल त्रिपाठी

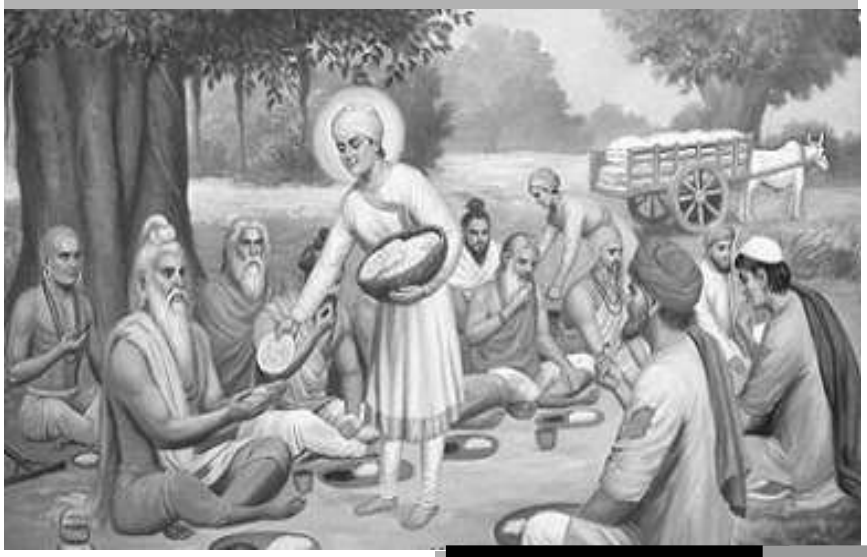

हमारे तुम सबके बीच आने का एक ही उद्देश्य है कि हम समाज को सही व्यक्ति देकर जाएँ। व्यक्ति होते तो यह सारा समाज नया हो जाता। सारे समाज का कायाकल्प हो जाता। पचास आदमी गाँधी के, बुद्ध के साथ थे। वे युग-परिवर्तन कर सके, क्योंकि उनके पास काम के इनसान थे। विवेकानन्द के पास निवेदिता व कुछ काम के व्यक्ति थे। आज जहाँ देखो, वहीं जानवर नजर आते हैं। यदि काम के इनसान होते तो जमीन पलट दी गई होती। तुम सब यहाँ आए हो तो काम के आदमी बन जाओ। हमने जीवन भर व्यक्ति के मर्म को छुआ है व अपना ब्राह्मण स्वरूप खोलकर रख दिया है। नतीजा यह कि हमारे साथ अनगिनत आदमी जुड़े। तुम यदि सही अर्थों में जुड़े हो तो अपना भीतर वाला हिस्सा भी लोकसेवी का बना लो व समाज के लिए कुछ कर डालने का संकल्प ले डालो।

गाँधी जी ने अपने साथ में रहने वाले सभी व्यक्तियों का व्यक्तित्व बना दिया था।

व्यक्ति लोकसेवा के क्षेत्र में प्रवेश करके भी उच्छृंखल स्तर का अनगढ़ बना रहता है। तुम्हें ईसामसीह की बात सुनाता हूँ। उनके शिष्य ने उनसे कहा कि हम भी आपके समान महान और बड़ा बनना चाहते हैं। हम क्या करें?

वे, जो पूरी तरह जुड़े धन्य हो गए। श्रेय-सौभाग्य के अधिकारी बने। तुम भी सही अर्थों में जुड़ जाओ तो तुम सबका व्यक्तित्व बने, सभी सँवर जाएँ। हमने वसन्त पर्व पर अपने भगवान से दीक्षा ली थी। यह कहा था कि अब 'मैं' समाप्त होता हूँ व 'आप' जीवित होते हैं। आपकी इच्छा प्रमुख मेरी इच्छा गौण। समर्पण किया था हमने। अनगिनत उसकी उपलब्धियाँ हैं। हमारा व्यक्तित्व हमारी मार्गदर्शक सत्ता ने शानदार बना दिया। तुम सबका भी ऐसा ही बन जाए, यदि तुम मन व आत्मा से समर्पण कर दो। यह हम कह इसलिए रहे हैं कि कहीं भावावेश में घर छोड़कर आए हो व मन में तुम्हारे दु:ख-क्लेश बना रहे, इसके स्थान पर एक ही बार में सारी स्थिति स्पष्ट हो जाए। कहीं के तो बन सको तुम।

हमने जो समर्पण किया, उसके बदले में हमारी मार्गदर्शक सत्ता ने हमें स्वयं सौंप दिया। हमारे अन्दर प्रभावोत्पादकता भर दी। वाणी में, लेखनी में, व्यक्तित्व में दैनन्दिन आचरण में। यही तुम्हारे अन्दर भी आ जाएगी। भगवान् के हम कोई सम्बंधी थोड़े ही हैं, जो उन्होंने हमारे साथ कोई विशेष पक्षपात किया हो तब तुम्हें भी क्यों नहीं वही सब मिल सकता है जो हमें मिला। बस कसौटी एक ही 'अहं' को गलाना, विसर्जन, समर्पण। जब तक अहंकार जिन्दा है, आदमी दो कौड़ी का है। जिस दिन यह मिट जाएगा आदमी बेशकीमती हो जाएगा। 'अहं' ही है, जिसके कारण न सिद्धान्त, न सेवा, न आदर्श आ पाते हैं।

व्यक्ति लोकसेवा के क्षेत्र में प्रवेश करके भी उच्छृंखल स्तर का अनगढ़ बना रहता है। तुम्हें ईसामसीह की बात सुनाता हूँ। उनके शिष्य ने उनसे कहा कि हम भी आपके समान महान और बड़ा बनना चाहते हैं। हम क्या करें? तो उन्होंने एक ही जवाब दिया-बच्चों जीवन भर मैं तिनका बना, विनम्र बना, गला तथा इसलिए इतने बड़े वृक्ष के रूप में विकसित हो सका। अपनी इच्छा समाप्त कर दीं तो सही अर्थों में बड़े बन गए। पहले तुम सब भी तिनके के समान छोटे बनो। तुम वैसा बन गए तो पेड़ बन सकोगे, इसमें कोई सन्देह नहीं है। वास्तव में सेण्टपाल भी इसी प्रकार सच्चे ईसाई थे। वे ईसा के बाद विकसित हुए। उनकी पीढ़ी के दूसरे महापुरुष भी विनम्रता-सेवा भावना, निरहंकारिता के कारण ही बने।

व्यक्ति को पहचानने की एक ही कसौटी है कि उसकी वाणी घटिया है या बढ़िया। व्याख्यान कला अलग है। मंच पर

तो सभी शानदार मालूम पड़ते हैं। प्रत्यक्ष सम्पर्क में आते ही व्यक्ति नंगा हो जाता है। जो प्राण, वाणी में है, वही परस्पर चर्चा-व्यवहार में परिलक्षित होता है। वाणी ही व्यक्ति का स्तर बताती है। व्यक्तित्व बनाने के लिए वाणी की विनम्रता जरूरी है। प्याज खाने वाले के मुँह से, शराब पीने वाले मसूड़े के मुँह से जो बदबू आती है, वाणी की कठोरता ठीक इसी प्रकार मुँह से निकलती है। अशिष्टता छिप नहीं सकती। यह वाणी से पता चल ही जाती है। अनगढ़ता मिटाओ, दूसरों का सम्मान करना सीखो। तुम्हें प्रशंसा करना आता ही नहीं, मात्र निन्दा करना आता है। व्यक्ति के अच्छे गुण देखो, उनका सम्मान करना सीखो। तुरन्त तुम्हें परिणाम मिलना चालू हो जाएँगे।

वाणी की विनम्रता का अर्थ चाटुकारिता नहीं है। फिर समझो इस बात को, कतई मतलब नहीं है चापलूसी-वाणी की मिठास से। दोनों नितान्त भिन्न चीजें हैं। दूसरों की अच्छाइयों की तारीफ करना, मीठी बोलना एक ऐसा सद्गुण है, जो व्यक्ति को चुम्बक की तरह खींचता व अपना बनाता है। दूसरे सभी तुम्हारे अपने बन जाएँगे, यदि तुम यह गुण अपने अन्दर पैदा कर लो। इसके लिए अन्तः के अहंकार को गलाओ। अपनी इच्छा, बड़प्पन, कामना, स्वाभिमान को गलाने का नाम समर्पण है, जिसे तुमसे करने को मैंने कहा है व इसकी अनन्त फलश्रुतियाँ सुनाई हैं। अपनी इमेज विनम्र से विनम्र बनाओ। मैनेजर की, इंचार्ज की, बॉस की नहीं, बल्कि स्वयंसेवक की। जो स्वयंसेवक जितना बड़ा हैं, वह उतना ही विनम्र है, उतना ही महान बनने के बीजांकुर उसमें हैं। तुम सबमें वे मौजूद हैं। अहं की टकराहट बन्द होते ही उन्हें अन्दर टटोलो कि तुमने समर्पण किया है कि नहीं। पर्यवेक्षण इस श्रावणी पर्व पर अपने अन्तरंग का करो।

हमारी एक ही महत्त्वाकाँक्षा है कि हम सहस्रभुजा वाले सहस्रशीर्षा पुरुष बनना चाहते हैं। तुम सब हमारी भुजा बन जाओ, हमारे अंग बन जाओ, यह हमारी मन की बात है। गुरु-शिष्य एक-दूसरे से अपने मन की बात कहकर हल्के हो जाते हैं। हमने अपने मन की बात तुमसे कह दी। अब तुम पर निर्भर है कि तुम कितना हमारे बनते हो? पति-पत्नी की तरह, गुरु व शिष्य की आत्मा में भी परस्पर ब्याह होता है, दोनों एक-दूसरे से घुल-मिलकर एक हो जाते हैं। समर्पण का अर्थ है-दो का अस्तित्व मिटाकर एक हो जाना। तुम भी अपना अस्तित्व मिटाकर हमारे साथ मिला दो व अपनी क्षुद्र महत्त्वाकाँक्षाओं को हमारी अनन्त आध्यात्मिक महत्त्वाकाँक्षाओं में विलीन कर दो। जिसका अहं जिन्दा है, वह वेश्या है। जिसका अहं मिट गया, वह पवित्रता है। देखना है कि हमारी भुजा, आँख, मस्तिष्क बनने के लिए तुम कितना अपने अहं को गला पाते हो? इसके लिए निरहंकारी बनो। स्वाभिमानी तो होना चाहिए, पर निरहंकारी बनकर। निरहंकारी का प्रथम चिह्न है वाणी की मिठास।

वाणी व्यक्तित्व का हथियार है। सामने वाले पर वार करना हो तो तलवार नहीं, कलाई नहीं, हिम्मत की पूछ होती है। हिम्मत न हो तो हाथ में तलवार भी हो, तो बेकार है। यदि वाणी सही है तो तुम्हारा व्यक्तित्व जीवन्त हो जाएगा, बोलने लगेगा व सामने वाले को अपना बना लेगा। अपनी विनम्रता, दूसरों का सम्मान व बोलने में मिठास, यही व्यक्तित्व के प्रमुख हथियार हैं।

वाणी व्यक्तित्व का हथियार है। सामने वाले पर वार करना हो तो तलवार नहीं, कलाई नहीं, हिम्मत की पूछ होती है। हिम्मत न हो तो हाथ में तलवार भी हो, तो बेकार है। यदि वाणी सही है तो तुम्हारा व्यक्तित्व जीवन्त हो जाएगा, बोलने लगेगा व सामने वाले को अपना बना लेगा। अपनी विनम्रता, दूसरों का सम्मान व बोलने में मिठास, यही व्यक्तित्व के प्रमुख हथियार हैं। इनका सही उपयोग करोगे तो व्यक्तित्व वजनदार बनेगा। ❑

सूचना

समस्त पाठकों/ लेखकों, विचारकों तथा चिन्तकों से प्रस्तुत पत्रिका में प्रकाशनार्थ लेख आमंत्रित हैं। लेख, कविता, लघुकथा, आलेख, लघु-नाटिका, आध्यात्मिक प्रसंग, उवाच, समीक्षा, इतिहास-प्रमाण रचना, आधुनिक विज्ञानबद्ध, मानव धर्म एवं शुद्ध स्वच्छ रमणीय/ मानव धर्मी, प्रशासन-व्यवस्था, ज्योतिष विज्ञान, स्वास्थ संबंधी, योगदर्शन, भारतविद्या (इंडोलॉजी) आदि विषयों पर होने चाहिए। रचना साफ़ व लिखाई में फुल-स्केप काग़ज पर एक जैसी लिखी होनी चाहिए। लेख पूर्व-प्रकाशित नहीं होने चाहिए। लेख के साथ अपना नाम, शाखा सदस्यता, फोन-नंबर अवश्य दें।

इतनी शक्ति हमें देना दाता, मन का विश्वास कमजोर हो ना...

''समय'' और ''धैर्य'' ये दोनों ही सच्चे हीरे-मोती हैं

राजेश चौबे

एक साधु था, वह रोज घाट के किनारे बैठ कर चिल्लाया करता था, जो चाहोगे सो पाओगे। जो चाहोगे सो पाओगे। बहुत से लोग वहाँ से गुजरते थे पर कोई भी उसकी बात पर ध्यान नहीं देता था और सब उसे एक पागल आदमी समझते थे। एक दिन एक युवक वहाँ से गुजरा और उसने उस साधु की आवाज सुनी।

एक साधु था, वह रोज घाट के किनारे बैठ कर चिल्लाया करता था, जो चाहोगे सो पाओगे। जो चाहोगे सो पाओगे।

बहुत से लोग वहाँ से गुजरते थे पर कोई भी उसकी बात पर ध्यान नहीं देता था और सब उसे एक पागल आदमी समझते थे। एक दिन एक युवक वहाँ से गुजरा और उसने उस साधु की आवाज सुनी, जो चाहोगे, सो पाओगे, जो चाहोगे सो पाओगे और आवाज सुनते ही वह युवक उसके पास चला गया।

'उसने साधु से पूछा' 'महाराज आप बोल रहे थे कि 'जो चाहोगे सो पाओगे' तो क्या आप मुझको वो दे सकते हो जो मैं चाहता हूँ? साधु उसकी बात को सुनकर बोला-हाँ बेटा तुम जो कुछ भी चाहते हो मैं उसे जरुर दूँगा, बस तुम्हें मेरी बात माननी होगी,, लेकिन पहले ये तो बताओ कि तुम्हें आखिर चाहिये क्या? युवक बोला-मेरी एक ही ख्वाहिश है मैं हीरों का बहुत बड़ा व्यापारी बनना चाहता हूँ..' साधु बोला, ''कोई बात नहीं मैं तुम्हें एक हीरा और एक मोती देता हूँ, उससे तुम जितने भी हीरे मोती बनाना चाहोगे बना पाओगे और ऐसा कहते हुए साधु ने अपना हाथ आदमी की हथेली पर रखते हुए कहा, 'पुत्र', मैं तुम्हें दुनिया का सबसे अनमोल हीरा दे रहा हूं, लोग इसे 'समय' कहते हैं, इसे तेजी से अपनी मुट्ठी में पकड़ लो और इसे कभी मत गंवाना, तुम इससे जितने चाहो उतने हीरे बना सकते हो।

युवक अभी कुछ सोच ही रहा था कि साधु उसकी दूसरी हथेली, पकड़ते हुए बोला, पुत्र इसे पकड़ो, यह दुनिया का सबसे कीमती मोती है, लोग इसे 'धैर्य' कहते हैं, जब कभी समय देने के बावजूद परिणाम ना मिलें तो इस कीमती मोती को धारण कर लेना, याद रखना जिसके पास यह मोती है, वह दुनिया में कुछ भी प्राप्त कर सकता है।

युवक गम्भीरता से साधु की बातों पर विचार करता है और निश्चय करता है कि आज से वह कभी अपना समय बर्वाद नहीं करेगा और हमेशा धैर्य से काम लेगा और ऐसा सोचकर वह हीरों के एक बहुत बड़े व्यापारी के यहाँ काम शुरू करता है और अपनी मेहनत और ईमानदारी के बल पर एक दिन खुद भी हीरों का बहुत बड़ा व्यापारी बनता है।

'समय' और 'धैर्य' वह दो अनमोल हीरे-मोती हैं जिनके बल पर हम बड़े से बड़ा लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं, अत: जरूरी यह है कि हम अपने कीमती 'समय' को बर्वाद ना करें और अपनी मंजिल तक पहुँचने के लिए 'धैर्य' से काम लें..आज दुनिया में जितने भी सफल लोग हैं वो कोई भगवान के अवतार नहीं हैं असल में उन्होंने अपने पल-पल 'समय' को अपने आपको बनाने में लगाया है और अपने कार्य 'काम' को उन्होंने बड़े ही 'धैर्य' से किया है जिनके बल पर कोई भी बड़े से बड़ा लक्ष्य प्राप्त कर सकता है..कर्म फल को प्राप्त कर सकता है, क्योंकि कर्म का फल ईश्वर स्वयं प्रदान करता है..

❑

दोष-दृष्टि को सुधारना ही चाहिए

डॉ. अनिल त्रिपाठी

क्या कभी आपने यह सोचा कि आप पग-पग पर खिन्न, असंतुष्ट, उद्विग्न अथवा उत्तेजित क्यों रहते हैं? क्यों आपको समाज, संसार मनुष्यों, मित्रों, वस्तुओं, परिस्थितियों यहाँ तक अपने से भी शिकायत रहती है? आप सब कुछ करते, बरतते और भोगते हुए भी वह मजा, आनन्द और प्रसन्नता नहीं पाते, जो मिलनी चाहिये और संसार के अन्य असंख्यों लोग पा रहे हैं। आप विचारक, आलोचक, शिक्षित, और सभ्य भी हैं, किन्तु आपकी यह विशेषता भी आपको प्रसन्न नहीं कर पाती। स्त्री-बच्चे, घर, मकान सब कुछ आपको उपलब्ध है। फिर भी आप अपने अन्दर एक अभाव और एक असंतोष अनुभव ही करते रहते हैं। घर, बाहर, मेले-ठेले, सफर, यात्रा, सभा-समितियों, भाषणों, वक्तव्यों- किसी में भी कुछ मजा ही नहीं आता। हर समय एक नाराजी, नापसन्दी एवं नकारात्मक ध्वनि परेशान ही रखती है। संसार की किसी भी बात, वस्तु और व्यक्ति से आपका तादात्म्य ही स्थापित हो पाता है।

साथ ही आप पूर्ण स्वस्थ हैं। मस्तिष्क का कोई विकार आप में नहीं है। आपका अन्त:करण भी सामान्य दशा में है और आस-पास में ऐसी कोई घटना भी नहीं घटी है, जिससे आपकी अभिरुचिता एवं प्रसादत्व विक्षत हो गया हो। ऐसा भी नहीं हुआ कि विगत दिनों में ही किसी ऐसे अप्रिय संयोग से सामंजस्य स्थापित करना है, जिसकी अनुभूति आज भी आपको विषाण बनाये हुए हैं।

वास्तव में बात बड़ी ही विचित्र और अबूझ-सी मालूम होती है। जब प्रत्यक्ष में इस स्थायी अप्रियता का कोई कारण नहीं दिख पड़ा, फिर ऐसा कौन-सा चोर, कौन-सा ठग आपके पीछे अप्रत्यक्ष रूप से लगा हुआ है, जो हर बात के आनन्द से आपको वंचित किए तो नहीं घर पर बैठी है। क्योंकि 'दोष-दर्शन' का दृष्टिकोण भी जीवन को कुछ-कुछ ऐसा ही बना देता है। दोष-दर्शन और संतोष, दोष-दर्शन और प्रसन्नता, दोष-दर्शन तथा सामंजस्य का नैसर्गिक विरोध है। दोष-दृष्टि

जरा ध्यान से देखिये कि आपके अन्दर 'दोष-दर्शन' करने की दुर्बलता, तो नहीं घर पर बैठी है। क्योंकि 'दोष-दर्शन' का दृष्टिकोण भी जीवन को कुछ-कुछ ऐसा ही बना देता है। दोष-दर्शन और संतोष, दोष-दर्शन और प्रसन्नता, दोष-दर्शन तथा सामंजस्य का नैसर्गिक विरोध है। दोष-दृष्टि मनुष्य के हृदय पर उसके मानस पर एक ऐसा आवरण है, जो न हो बाहर की प्रसन्न- किरणों को भीतर प्रतिबिम्बित होने देता है और न भीतर का उल्लास बाहर ही प्रकट होने देता है।

हुये आपके जन्म-सिद्ध अधिकार प्रसन्नता का अपहरण कर लिया करता है। इसको खोजिये, गिरफ्तार करिये और अपने पास से मार भगाइये। जीवन में सदा दु:खी और खिन्नावस्था में रहने का पाप न केवल वर्तमान ही बल्कि आगामी शत-शत जीवनों तक को प्रभावित कर डालता है।

देखिये और जरा ध्यान से देखिये कि आपके अन्दर 'दोष-दर्शन' करने की दुर्बलता, मनुष्य के हृदय पर उसके मानस पर एक ऐसा आवरण है, जो न हो बाहर की प्रसन्न- किरणों को भीतर प्रतिबिम्बित होने देता है और न भीतर का उल्लास बाहर ही प्रकट होने देता है। इसे मनुष्य एवं आनन्द के बीच एक लौह दीवार ही समझना चाहिये। लीजिये दोषदर्शी व्यक्तियों की दशा से अपना मिलान कर लीजिये और यदि अपने में दोष पायें तो तुरन्त सुधार कर डालिये, जिससे, अगले दिनों में आप भी उस

प्रकार प्रसन्न रह सकें, जिस प्रकार लोग रहते हैं और उन्हें रहना ही चाहिये।

दोष-दर्शन से दूषित व्यक्ति जब किसी व्यक्ति के संपर्क में आता है, तब अपने मनोभाव के अनुसार उसके अन्दर बुराइयाँ ढूँढ़ने लगता है और हठात् कोई न कोई बुराई निकाल ही लेता है। फिर चाहे वह व्यक्ति कितना ही अच्छा क्यों न हो। उदाहरण के लिये किसी विद्वान महात्मा को ही ले लीजिये। लोग उसे बुलाते, आदर सत्कार करते और उसके व्याख्यान से लाभ उठाते हैं। महात्मा जी का व्याख्यान सुन कर सारे लोग पुलकित, प्रसन्न व लाभान्वित होते हैं।

उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते और अपने उतने समय को बड़ा सार्थक मानते। अनेक दिनों, सप्ताहों तथा मासों तक उस सुखद घटना का स्मरण करते और ऐसे संयोग की पुनरावृत्ति चाहने लगते। अधिकांश लोग उस व्याख्यान का लाभ उठा कर अपना ज्ञान बढ़ाते, कोई गुण ग्रहण करते और किसी दुर्गुण से मुक्ति पाते हैं। वह उनके लिए एक ऐसा सुखद संयोग होता है जो गहराई तक अपनी छाप छोड़ जाता है, ऐसे ही सुव्यक्ति गुणग्राही कहे जाते हैं।

अब दोष-द्रष्टा को ले लीजिये। उसकी स्थिति बिल्कुल विपरीत होती है। जहाँ अन्य लोग उक्त महात्मा में गुण ही देख सके वहाँ उसे केवल दोष ही दिखाई दिये। उसका हृदय महात्मा के प्रशंसकों के बीच, उनकी कुछ खामियों के रखने के लिये बेचैन हो जाता। जब अवकाश अथवा अवसर न मिलता तो प्रशंसा में सम्मिलित होकर उनके बीच बोलने का अवसर निकाल कर कहना प्रारम्भ कर देता- ''हाँ, महात्मा जी का व्याख्यान था तो अच्छा- लेकिन उतना प्रभावोत्पादक नहीं था, जितना कि लोग प्रभावित हुए अथवा प्रशंसा कर रहे हैं। कोई मौलिकता तो थी नहीं। यही सब बातें अमुक नेता ने अपनी प्रचार-स्पीच में शामिल करके देशकाल के अनुसार उसमें धार्मिकता का पुट दे दिया था। अजी साहब क्या नेता, क्या महन्त सबके-सब अपने रास्ते जनता पर नेतृत्व करने के सिवाय और कोई

अब दोष-द्रष्टा को ले लीजिये। उसकी स्थिति बिल्कुल विपरीत होती है। जहाँ अन्य लोग उक्त महात्मा में गुण ही देख सके वहाँ उसे केवल दोष ही दिखाई दिये। उसका हृदय महात्मा के प्रशंसकों के बीच, उनकी कुछ खामियों के रखने के लिये बेचैन हो जाता।

उद्देश्य नहीं रखते। यह सब पूजा, प्रतिष्ठा व पेट का धन्धा है।

यदि लोग सच्चाई से विमुख होकर उससे सहमत न हुए तब तो वह वाद-विवाद के लिये मैदान पकड़ लेता है और अन्त में अपना दोषदर्शी चित्र दिखा कर लोगों की हीन दृष्टि का आखेट बन कर प्रसन्नता खोकर और विषण्ण होकर लौट आता है। जहाँ गुण ग्राहकों ने उस दिन महीनों काम आने वाली प्रसन्नता प्राप्त की, वहाँ दोष-दृष्टा ने जो कुछ टूटी-फूटी प्रसन्नता उस समय पास में थी वह भी गवाँ दी।

दोष-दर्शन की प्रक्रिया जोर पकड़ ही चुकी थी, उसकी सखी-सहेली झल्लाहट, खीझ, कुढ़न, कुण्ठा, अरुचि आदि सब साथ ही लगी हुई थीं। निदान घर आकर भोजन अच्छा न लगा पत्नी निहायत बेसऊर दिखाई देने लगी। बच्चे यदि सोते मिले तो नालायक हैं। शाम से ही सो जाते हैं। और यदि जगते मिले तो लापरवाह और तन्दुरुस्ती का ध्यान न रखने वाले बन गये। तात्पर्य यह कि उस दिन जहाँ अन्य सब लोग अधिक से अधिक प्रसन्नता के अधिकारी बने वहाँ दोषदर्शी के लिये हर बात खेदजनक और दुखदायी बन गई।

किसी मित्र सम्बन्धी अथवा आत्मीयजन ने मानिये जन्म-दिन अथवा किसी अन्य शुभ अवसर पर अपनी योग्यता एवं समाज के अनुसार कोई उपहार दिया अथवा भेजा। कोई भी व्यक्ति इस सम्मान और स्नेह से पुलकित हो उठता और आभार भरा धन्यवाद देते-देते न अघाता। किन्तु दोषदर्शी तो अपने रोग से मजबूर ही रहता है। यद्यपि वह आभार एवं धन्यवाद न प्रकट करने की असभ्यता नहीं करता तथापि और कुछ नहीं उसमें इतना ही शामिल कर देता कि आपने बेकार यह चीज भेजी। यह तो मेरे पास पहले से ही थी और मुझे ऐसा रंग यह डिजाइन पसन्द नहीं है। यह रंग और प्रकार उपहार के रूप में बहुत आम और सस्ते हो गये हैं। इससे अच्छा यह होता कि आप सद्भावना और बधाई के ही दो शब्द दे देते। बात भले ही सही रही हो। किन्तु इस भावना ने, इस दोष-दृष्टि ने उसको स्वयं तो प्रसन्न नहीं ही होने दिया साथ ही अपने मित्र और स्वजन की प्रसन्नता भी छीन ली।

यही बात नहीं कि दोष-दृष्टा केवल दूसरों में ही बुराई और कमियाँ देखता हो। स्वयं अपने प्रति भी उसका यही अत्याचार रहा करता है। उदाहरण के लिये वह बाजार से अपने लिये कोई वस्तु खरीदने जाती है। पहले तो वह

कितनी ही प्रकार की चीजें क्यों न दिखलाई जायें, उसे पसन्द ही नहीं आती, सबमें कोई-न-कोई दोष दिखलाई देता है। वस्तु के निर्दोष होने पर भी वह अपनी ओर से किसी दोष का आरोपण कर ही लेगा। अपनी इस प्रक्रिया से थक जाने के बाद जब चीज लेकर घर आता है। तब भी उसका पेट अप्रशंसा से भरा नहीं होता। चीज डाली और कहना आरम्भ कर दिया- ''खरीदने को खरीद तो अवश्य लाया लेकिन कुछ पसन्द नहीं आई। यदि पत्नी

किसी में गुण की कल्पना न कर सकने के कारण दोषदर्शी अविश्वासी भी होता है। वह किसी की सद्भावना एवं सहानुभूति में भी कान खड़े करने लगता है। प्रेम एवं प्रशंसा में भी स्वार्थपूर्ण चाटुकारिता का दोष देखता है। इसलिये संपर्क में आने और स्नेहपूर्ण बरताव करने वाले हर व्यक्ति से भयाकुल और शंकाकुल रहा करता है।

इस बात को नहीं मानती और चुनाव की प्रशंसा करती है, तो झूठी प्रशंसा करने का आरोप पाती है। जब तक वह अपनी पसन्द, बाजारदारी, चीज की पहचान के विषय में आलोचना नहीं कर लेता, बुराई नहीं निकाल लेता, अपनी अकल और अनुभव को कोस नहीं लेता चैन नहीं पड़ता। इस प्रकार वह इस प्रसन्नता के छोटे अवसर को भी खिन्नता से कडुआ बना ही लेता है।

तात्पर्य यह है कि दोष-दर्शी कितने ही सुन्दर स्थान, वस्तु और व्यक्ति के संपर्क में क्यों न आये अपने अवगुण के प्रभाव से उससे मिलने वाले आनन्द से वंचित ही रहता है। निदान इस लम्बे-चौड़े संसार में उसे न तो कहीं आनन्द दीखता है और न किसी वस्तु में सामंजस्य का सुख प्राप्त होता है। उसे हर व्यक्ति, हर वस्तु और हर वातावरण अपनी रुचि के साथ असमंजस उत्पन्न करती ही दीखती है। जबकि गुण-ग्राहक हर व्यक्ति, हर वस्तु और हर वातावरण में सामंजस्य और सुन्दरता ही खोज निकालता है। यही कारण है कि गुण-ग्राहक सदैव प्रसन्न और दोषान्वेषक सदा खिन्न बना रहता है।

वस्तुतः बात यह है कि संसार की प्रत्येक वस्तु गुण-दोषमय ही है। कोई भी वस्तु एवं व्यक्ति ऐसा नहीं हो सकता कि जिसमें या तो गुण-ही-गुण भरे हों अथवा दोष-ही-दोष। अपनी दृष्टि के अनुसार हर व्यक्ति उसमें गुण या दोष देख कर प्रसन्न अथवा खिन्न हुआ करता है। बुद्धिमान व्यक्ति अपने लाभ और हित के लिये हर बात के अच्छे-बुरे दो पहलुओं में से केवल गुण पक्ष पर ही दृष्टि डालता है। क्योंकि वह जानता है, कि विपक्ष पर ध्यान देने, उसको ही देखते रहने से मन को अशाँति के अतिरिक्त और कुछ हाथ न लगेगा, दोष-दृष्टि रखने और दोषान्वेषक करने से घृणा तथा द्वेष का ही प्रादुर्भाव होता है, जिसका परिणाम कलह-क्लेश अथवा अशाँति असन्तोष के सिवाय और कुछ नहीं होता। इससे वस्तु अथवा व्यक्ति की तो कुछ हानि होती नहीं अपना हृदय कलुषित और कलंकित होकर रह जाता है। अपने दृष्टि-दोष के कारण प्रायः अच्छी चीजें भी बुरी और गुण भी अवगुण होकर हानिकारक बन जाते हैं। जैसे स्वाँति-जल का ही उदाहरण ले लीजिये। स्वाँति की बूँद जब सीप के मुख में पड़ जाती है, तब मोती बन कर फलीभूत होती है और यदि वही बूँद साँप के मुख में पड़ जाती है तो विष का रूप धारण कर लेती हैं। वस्तु एक ही है किन्तु वह उपयोग और संपर्क के गुण दोष के कारण सर्वथा विपरीत परिणाम में फलीभूत हुई।

किसी में गुण की कल्पना न कर सकने के कारण दोषदर्शी अविश्वासी भी होता है। वह किसी की सद्भावना एवं सहानुभूति में भी कान खड़े करने लगता है। प्रेम एवं प्रशंसा में भी स्वार्थपूर्ण चाटुकारिता का दोष देखता है। इसलिये संपर्क में आने और स्नेहपूर्ण बरताव करने वाले हर व्यक्ति से भयाकुल और शंकाकुल रहा करता है। उसे विश्वास ही नहीं होता कि संसार में कोई निःस्वार्थ और निर्दोष-भाव से मिल कर हितकारी सिद्ध हो सकता है। विश्वास, आस्था, श्रद्धा, सराहना से रहित व्यक्ति का खिन्न असंतुष्ट और व्यग्र रहना स्वाभाविक ही है, जैसा कि दोष-दर्शी रहता भी है। यदि आपको अपने अन्दर इस प्रकार की दुर्बलता दिखी हो तो तुरन्त ही उसे निकालने के लिए और उसके स्थान पर गुण-ग्राहकता का गुण विकसित कीजिये। इस दशा में आपको हर व्यक्ति, वस्तु और वातावरण में आनंद, प्रशंसा अथवा विनोद की कुछ-न-कुछ सामग्री मिल ही जायेगी। दूसरों के गुण-दोषों में से उस हंस की तरह केवल गुण ही ग्रहण कर सकेंगे, जोकि पानी मिले हुए दुध में से केवल दूध-दूध ही ग्रहण कर लेता है और पानी छोड़ देता है।

दूसरों की अच्छाइयों को खोजने, उनको देख-देख प्रसन्न होने और उनकी सराहना करने का स्वभाव यदि अपने अन्दर विकसित कर लिया जाये तो आज दोष-दर्शन के कारण जो संसार, जो वस्तु और जो व्यक्ति हमें काँटे की तरह चुभते हैं, वे फूल की तरह प्यारे लगने लगें। जिस दिन यह दुनिया हमें प्यारी लगने लगेगी, इसमें दोष, दुर्गुण कम दिखाई देंगे, उस दिन हमारे हृदय से द्वेष एवं घृणा का भाव निकल जायेगा और हमें हर दिशा और हर वातावरण में प्रसन्नता ही आने लगेगी। दुःख, क्लेश और क्षोभ, रोष का कोई कारण ही शेष न रह जायेगा। ❑

सात पौराणिक पात्र जो आज भी है जीवित

अन्विता अग्रवाल

हमारे धर्मग्रंथो में एक श्लोक है

'अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनुमांश्च विभीषणः।
कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरंजीविनः
सप्तैतान् संस्मरेन्नित्यं मार्कण्डेयमथाष्टम।
जीवेद्वर्षशतं सोपि सर्वव्याधिविवर्जित॥'

इस श्लोक की प्रथम दो पंक्तियों का अर्थ है की अश्वत्थामा, बलि, व्यास, हनुमान, विभीषण, कृपाचार्य और भगवान परशुराम ये सात महामानव चिरंजीवी हैं। तथा अगली दो पंक्तियों का अर्थ है की यदि इन सात महामानवों और आठवे ऋषि मार्कण्डेय का नित्य स्मरण किया जाए तो शरीर के सारे रोग समाप्त हो जाते है और 100 वर्ष की आयु प्राप्त होती है।

आइये जानते है इन सात महामानवों के बारे में जिनके बारे में माना जाता है की वो पृथ्वी पर आज भी जीवित है। योग में जिन अष्ट सिद्धियों की बात कही गई है वे सारी शक्तियाँ इनमें विद्यमान है। यह सब किसी न किसी वचन, नियम या शाप से बंधे हुए हैं और यह सभी दिव्य शक्तियों से संपन्न है।

परशुराम

भगवान विष्णु के छठें अवतार है परशुराम। परशुराम के पिता ऋषि जमदग्नि और माता रेणुका थीं। माता रेणुका ने पाँच पुत्रों को जन्म दिया, जिनके नाम क्रमशः वसुमान, वसुषेण, वसु, विश्वावसु तथा राम रखे गए। राम ने शिवजी को प्रसन्न करने के लिए कठोर तप किया था। शिवजी तपस्या से प्रसन्न हुए और राम को अपना फरसा (एक हथियार) दिया था। इसी वजह से राम परशुराम कहलाने लगे। इनका जन्म हिन्दी पंचांग के अनुसार वैशाख मास के शुक्ल पक्ष की तृतीया को हुआ था। इसलिए वैशाख मास के शुक्ल पक्ष में आने वाली तृतीया को अक्षय तृतीया कहा जाता है। भगवान पराशुराम राम के पूर्व हुए थे, लेकिन वे चिरंजीवी होने के कारण राम के काल में भी थे। परशुराम ने 21 बार पृथ्वी से समस्त क्षत्रिय राजाओं का अंत किया था। सम्पूर्ण कथा आप यहां पढ़ सकते है आखिर क्यों भगवान परशुराम ने किया था 21 बार क्षत्रियों का संहार? इसके अलावा एक बार इन्होंने अपनी माता रेणुका का भी वध कर दिया था परशुराम ने आखिर ऐसा क्यों किया जानने के लिए पढ़े जानिए, अपनी माता का वध क्यों किया था परशुराम ने और कहाँ मिली थी उन्हें मातृहत्या के पाप से मुक्ति?

बलि

राजा बलि के दान के चर्चे दूर-दूर तक थे। देवताओं पर चढ़ाई करने राजा बलि ने इंद्रलोक पर अधिकार कर लिया था। बलि सतयुग में भगवान वामन अवतार के समय हुए थे। राजा बलि के घमंड को चूर करने के लिए भगवान ने ब्राह्मण का भेष धारण कर राजा बलि से तीन पग धरती दान में माँगी थी। राजा बलि ने कहा कि जहाँ आपकी इच्छा हो तीन पैर रख दो। तब भगवान ने अपना विराट रूप धारण कर दो पगों में तीनों लोक नाप दिए और तीसरा पग बलि के सर पर रखकर उसे पाताल लोक भेज दिया। शास्त्रों के अनुसार राजा बलि भक्त प्रहलाद के वंशज हैं। राजा बलि से श्रीहरि अतिप्रसन्न थे। इसी वजह से श्री विष्णु राजा बलि के द्वारपाल भी बन गए थे।

हनुमान

अंजनी पुत्र हनुमान को भी अजर अमर रहने का वरदान मिला हुआ है। यह राम के काल में राम भगवान के परम भक्त रहे हैं। हजारों वर्षों बाद वे महाभारत काल में भी नजर आते हैं। महाभारत में प्रसंग हैं कि भीम उनकी पूँछ को मार्ग से हटाने के लिए कहते हैं तो हनुमानजी कहते हैं कि तुम ही हटा लो, लेकिन भीम अपनी पूरी ताकत लगाकर भी उनकी पूँछ नहीं हटा पाता है। सीता ने हनुमान को लंका की अशोक वाटिका में राम का संदेश सुनने के बाद आशीर्वाद दिया था कि वे अजर-अमर रहेंगे।

विभिषण

राक्षस राज रावण के छोटे भाई हैं विभीषण। विभीषण श्रीराम के अनन्य भक्त हैं। जब रावण ने माता सीता हरण किया था, तब विभीषण ने रावण को श्रीराम से शत्रुता न करने के लिए बहुत समझाया था। इस बात पर रावण ने विभीषण को लंका से निकाल दिया था। विभीषण श्रीराम की सेवा में चले गए और रावण के अधर्म को मिटाने में धर्म का साथ दिया।

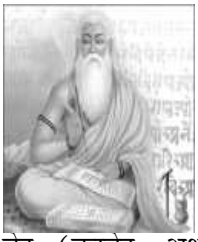

ऋषि व्यास

ऋषि व्यास जिन्हे की वेद व्यास के नाम से भी जाना जाता है। उन्होंने चारों वेद (ऋग्वेद, अथर्ववेद, सामवेद और यजुर्वेद), सभी 18 पुराणों, महाभारत और श्रीमद्भागवत् गीता की रचना की थी। वेद व्यास, ऋषि पाराशर और सत्यवती के पुत्र थे। इनका जन्म यमुना नदी के एक द्वीप पर हुआ था और इनका रंग सांवला था। इसी कारण ये कृष्ण द्वैपायन कहलाए। इनकी माता ने बाद में शान्तनु से विवाह किया, जिनसे उनके दो पुत्र हुए, जिनमें बड़ा चित्रांगद युद्ध में मारा गया और छोटा विचित्रवीर्य संतानहीन मर गया।

कृष्ण द्वैपायन ने धार्मिक तथा वैराग्य का जीवन पसंद किया, किन्तु माता के आग्रह पर इन्होंने विचित्रवीर्य की दोनों सन्तानहीन रानियों द्वारा नियोग के नियम से दो पुत्र उत्पन्न किए जो धृतराष्ट्र तथा पाण्डु कहलाए, इनमें तीसरे विदुर भी थे।

अश्वत्थामा

अश्वथामा गुरु द्रोणाचार्य के पुत्र हैं। ग्रंथों में भगवान शंकर के अनेक अवतारों का वर्णन भी मिलता है। उनमें से एक अवतार ऐसा भी है, जो आज भी पृथ्वी पर अपनी मुक्ति के लिए भटक रहा है। ये अवतार हैं गुरु द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा का। द्वापरयुग में जब कौरव व पांडवों में युद्ध हुआ था, तब अश्वत्थामा ने कौरवों का साथ दिया था। धर्म ग्रंथों के अनुसार भगवान श्रीकृष्ण ने ही ब्रह्मास्त्र चलाने के कारण अश्वत्थामा को चिरकाल तक पृथ्वी पर भटकते रहने का श्राप दिया था।

अश्वथामा के संबंध में प्रचलित मान्यता मध्य प्रदेश के बुरहानपुर शहर से 20 किलोमीटर दूर एक किला है। इसे असीरगढ़ का किला कहते हैं। इस किले में भगवान शिव का एक प्राचीन मंदिर है। यहां के स्थानीय निवासियों का कहना है कि अश्वत्थामा प्रतिदिन इस मंदिर में भगवान शिव की पूजा करने आते हैं।

कृपाचार्य

कृपाचार्य अश्वथामा के मामा और कौरवों के कुलगुरु थे। शिकार खेलते हुए शांतनु को दो शिशु प्राप्त हुए। उन दोनों का नाम कृपी और कृप रखकर शांतनु ने उनका लालन-पालन किया। महाभारत युद्ध में कृपाचार्य कौरवों की ओर से सक्रिय थे। कृप और कृपि का जन्म महर्षि गौतम के पुत्र शरद्वान के वीर्य के सरकंडे पर गिरने के कारण हुआ था।

ऋषि मार्कण्डेय

भगवान शिव के परम भक्त थे ऋषि मार्कण्डेय। इन्होंने शिवजी को तप कर प्रसन्न किया और महामृत्युंजय मंत्र को सिद्धि किया। महामृत्युंजय मंत्र का जाप मौत को दूर भगाने लिए किया जाता है। चुकि ऋषि मार्कण्डेय ने इस मन्त्र को सिद्ध किया था इसलिए इन सातों के साथ साथ ऋषि मार्कण्डेय के नित्य स्मरण के लिए भी कहा जाता है।

❑

ऋषि चिन्तन के सान्निध्य में

अगर आपको भी भगवान से शिकायत है तो जानें

जिन हाथों से बहुत मीठे फल खाने को मिले, एक कड़वे फल की शिकायत कैसे करूं? सब टुकड़े इसलिए लेता गया ताकि आपको पता न चले। हमारे आसपास कई लोग ऐसे हैं जो हमेशा भगवान से शिकायत करते रहते हैं। उनकी जिंदगी में कुछ भी बुरा होता है तो सीधाा आसमान की तरफ देखने लगते हैं। बगैर यह सोचे कि भगवान ने उन्हें जिंदगी में अब तक क्या कुछ दिया है। ऐसे लोगों के लिए कृष्ण-सुदामा की एक कथा बहुत प्रेरक हो सकती है। आप भी पढ़ें -

कृष्ण और सुदामा का प्रेम बहुत गहरा था। प्रेम भी इतना कि कृष्ण, सुदामा को रात दिन अपने साथ ही रखते थे। कोई भी काम होता, दोनों साथ-साथ ही करते। एक दिन दोनों वनसंचार के लिए गए और रास्ता भटक गए। भूखे-प्यासे एक पेड़ के नीचे पहुंचे। पेड़ पर एक ही फल लगा था। कृष्ण ने घोड़े पर चढ़कर फल को अपने हाथ से तोड़ा। कृष्ण ने फल के छह टुकड़े किए और अपनी आदत के मुताबिक पहला टुकड़ा सुदामा को दिया। सुदामा ने टुकड़ा खाया और बोला, 'बहुत स्वादिष्ट है। ऐसे फल कभी नहीं खाया। एक टुकड़ा और दे दें। दूसरा टुकड़ा भी सुदामा को मिल गया। सुदामा ने एक टुकड़ा और कृष्ण से मांग लिया। इसी तरह सुदामा ने पांच टुकड़े मांग कर खा लिए। जब सुदामा ने आखिरी टुकड़ा मांगा, तो कृष्ण ने कहा, 'यह सीमा से बाहर है। आखिर मैं भी तो भूखा हूं। मेरा तुम पर प्रेम है, पर तुम मुझसे प्रेम नहीं करते।' और कृष्ण ने फल का टुकड़ा मुंह में रख लिया। मुंह में रखते ही कृष्ण ने उसे थूक दिया, क्योंकि वह कड़वा था। कृष्ण बोले, तुम पागल तो नहीं, इतना कड़वा फल कैसे खा गए?' उस सुदामा का उत्तर था, जिन हाथों से बहुत मीठे फल खाने को मिले, एक कड़वे फल की शिकायत कैसे करूं? सब टुकड़े इसलिए लेता गया ताकि आपको पता न चलें। **-स्वामी जी**

भारत के साथ हमेशा से धोखा दर धोखा

साभार

छद्म इतिहासकारों ने नयी पीढ़ी को सच नहीं बताया सफेद झूठ का एक दुखद उदाहरण:

'कुतुबुद्दीन ऐवक और कुतुबमीनार का'

'यह भी कि कुतुबुद्दीन पोलो खेल में नहीं मरा था, बल्कि उसे उदयपुर-राजस्थान के स्वामिभक्त शुभ्रक घोड़े ने मारा था' किसी भी देश पर शासन करना है तो उस देश के लोगों का ऐसा ब्रेनवाश कर दो कि वो अपने देश, अपनी संस्कृति और अपने पूर्वजों पर गर्व करना छोड़ दें। इस्लामी हमलावरों और उनके बाद अंग्रेजों ने भी भारत में यही किया। हम अपने पूर्वजों पर गर्व करना भूलकर उन अत्याचारियों को महान समझने लगे, जिन्होंने भारत के लोगों पर बेहिसाब जुल्म किये थे। अगर आप दिल्ली घूमने गए हों तो आपने विष्णु- स्तम्भ (कुतुबमीनार) को भी अवश्य देखा होगा। जिसके बारे में बताया जाता है कि उसे कुतुबुद्दीन ऐवक ने बनबाया था। हम कभी जानने की कोशिश नहीं करते, कि कुतुबुद्दीन कौन था, उसने कितने बर्ष दिल्ली पर शासन किया, उसने कब विष्णु-स्तम्भ (कुतुबमीनार) को बनवाया या विष्णु-स्तम्भ (कुतुबमीनार) से पहले वो और क्या-क्या बनवा चुका था? कुतुबुद्दीन ऐवक मोहम्मद गौरी का खरीदा हुआ गुलाम था। मोहम्मद गौरी भारत पर कई हमले कर चुका था मगर हर बार उसे हारकर वापस जाना पडा था। ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती की जासूसी और कुतुबुद्दीन की रणनीति के कारण मोहम्मद गौरी, तराइन की लड़ाई में पृथ्वीराज चौहान को हराने में कामयाबी रहा और अजमेर-दिल्ली पर उसका कब्जा हो गया।

अजमेर पर कब्जा होने के बाद मोहम्मद गौरी ने चिश्ती से इनाम मांगने को कहा। तब चिश्ती ने अपनी जासूसी का इनाम मांगते हुए, आज की दिल्ली के एक भव्य और अनुपम मंदिर की ओर इशारा करके गौरी से कहा कि तीन दिन में इस मंदिर को तोड़कर मस्जिद बना कर दो. तब कुतुबुद्दीन ऐवक ने कहा आप तीन दिन कह रहे हैं मैं यह काम ढाई दिन में करके आपको दूंगा। कुतुबुद्दीन ने ढाई दिन में उस मंदिर को तोड़कर मस्जिद में बदल दिया। आज भी यह जगह 'अढाई दिन का झोपड़ा' के नाम से जानी जाती है. जीत के बाद मोहम्मद गौरी, पश्चिमी भारत की जिम्मेदारी 'कुतुबुद्दीन' को और पूर्वी भारत की जिम्मेदारी अपने दूसरे सेनापति 'बख्तियार खिलजी' (जिसने नालंदा को जलाया था) को सौंप कर वापस चला गया था। कुतुबुद्दीन कुल चार साल (1206 से 1210 तक) दिल्ली का शासक रहा. इन

चार साल में वो अपने राज्य का विस्तार, इस्लाम के प्रचार और बुतपरस्ती का खात्मा करने में लगा रहा। हांसी, कन्नौज, बदायूं, मेरठ, अलीगढ़, कालिंजर, महोबा, आदि को उसने जीता. अजमेर के विद्रोह को दबाने के साथ राजस्थान के भी कई इलाकों में उसने काफी आतंक मचाया।

जिसे कुतुबमीनार कहते हैं, वो महाराजा वीर विक्रमादित्य की वेधशाला थी, जहाँ बैठकर प्रख्यात खगोलशास्त्री वराहमिहिर ने ग्रहों, नक्षत्रों, तारों का अध्ययन कर, भारतीय कैलेण्डर 'विक्रम संवत्' का आविष्कार किया था। यहाँ पर 27 छोटे-छोटे भवन मंदिर) थे, जो 27 नक्षत्रों के प्रतीक थे और मध्य में विष्णु-स्तम्भ था, जिसको धरुव स्तम्भ भी कहा जाता था। कुतुबुद्दीन ऐवक ने उन 27 मंदिरों को तुड़वा दिया। विशाल विष्णु स्तम्भ को तोड़ने का तरीका समझ न आने पर उसने उसे तोड़ने के बजाय अपना नाम दे दिया। तब से उसे कुतुबमीनार कहा जाने लगा. कालान्तर में यह यह झूठ प्रचारित किया गया कि कुतुबमीनार को कुतुबुद्दीन ऐवक ने बनबाया था। जबकि वो एक विध्वंसक था न कि कोई निर्माता।

भारतीय घोड़े की बड़ी रोचक जानकारी-

अब बात करते हैं कुतुबुद्दीन की मौत की। इतिहास की किताबों में लिखा है कि उसकी मौत पोलो खेलते समय घोड़े से गिरने पर से हुई। ये सरासर झूठ है। कारण, तुर्क लोग 'पोलो' नहीं खेलते थे, पोलो खेल अंग्रेजों ने शुरू किया। अफगान, तुर्क लोग बुजकशी खेलते हैं, जिसमें एक बकरे को मारकर उसका सिर लेकर घोड़े पर भागते हैं। जो व्यक्ति उसे लेकर मंजिल तक पहुंचता है, वो जीतता है। सत्य यह है कि कुतबुद्दीन ने अजमेर के विद्रोह को कुचलने के बाद राजस्थान के अनेकों इलाकों में कहर बरपाया था। उसका सबसे कडा विरोध उदयपुर के राजा ने किया, परन्तु कुतुबद्दीन उसको हराने में कामयाब रहा. उसने धोखे से राजकुंवर कर्णसिंह को बंदी बनाकर और उनको जान से मारने की धमकी देकर, राजकुंवर और उनके घोड़े शुभ्रक को पकड कर लाहौर ले आया।

एक दिन राजकुंवर ने कैद से भागने की कोशिश की, लेकिन पकड़ा गया. इस पर क्रोधित होकर कुतुबुद्दीन ने उसका सर काटने का हुकुम दिया। दरिंदगी दिखाने के लिए उसने कहा कि बुजकशी खेला जाएगा लेकिन इसमें बकरे की जगह राजकुंवर का कटा हुआ सर इस्तेमाल होगा. कुतुबुद्दीन ने इस काम के लिए, अपने लिए घोड़ा भी राजकुंवर का 'शुभ्रक' चुना। कुतुबुद्दीन 'शुभ्रक' घोड़े पर सवार होकर अपनी टोली के साथ जन्नत बाग में पहुंचा. राजकुंवर को भी जंजीरों में बांधकर वहां लाया गया। राजकुंवर का सर काटने के लिए जैसे ही उनकी जंजीरों को खोला गया, शुभ्रक ने जोर से उछलकर कुतुबुद्दीन को अपनी पीठ से नीचे गिरा दिया और अपने पैरों से उसकी छाती पर कई बार किये, जिससे कुतुबुद्दीन वहीं पर मर गया।

इससे पहले कि सिपाही कुछ समझ पाते राजकुवर शुभ्रक घोड़े पर सवार होकर वहां से निकल गए. कुतुबुदीन के सैनिकों ने उनका पीछा किया मगर वो उनको पकड न सके। शुभ्रक कई दिन और कई रात दौड़ता रहा और अपने स्वामी को लेकर उदयपुर के महल के सामने आकर रुका। वहां पहुंचकर जब राजकुंवर ने उतरकर पुचकारा तो वह मूर्ति की तरह शांत खडा रहा। शुभ्रक घोड़ा मर चुका था, सर पर हाथ फेरते ही उसका निष्प्राण शरीर लुढ़क गया। कुतुबुद्दीन ऐवक की मौत और शुभ्रक की स्वामिभक्ति की इस अनुपम घटना के बारे में भारतीय इतिहासकार मौन हैं। इस विषय पर हमारे देश के स्कूलों में तो कुछ नहीं पढ़ाया जाता है, लेकिन इस घटना के बारे में फारसी के प्राचीन लेखकों ने काफी कुछ लिखा है। 'धन्य है भारत की वीरभूमि, जहाँ इंसान तो क्या जानवर भी अपनी स्वामिभक्ति के लिए अपने प्राण दांव पर लगा देते हैं। न इतिहासकार, न पत्रकार, न सरकार कोई इस विषय पर बात नहीं करेगा।

❑

आत्मोन्नति के चार आधार

गायत्री मंत्र हमारे साथ-साथ

भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

युग-निर्माण परिवार का गठन एक प्रयोगशाला के रूप में हुआ है। प्रयोगशाला में रासायनिक पदार्थ तैयार किए जाते है और उसके परिणाम को सर्वसाधारण के सामने उपस्थित किया जाता है। युग-निर्माण परिवार का गठन एक पाठशाला के तरीके से हुआ है, जहाँ विद्यार्थी पढ़ाए जाते हैं और पढ़-लिखकर के वे समाज के महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्वों को सँभालते हैं। गायत्री परिवार का गठन एक व्यायामशाला करते हैं और पहलवान बनकर के दंगल में कुश्तियाँ पछाड़ते हैं। युग-निर्माण परिवार का गठन नर्सरी के तरीके से किया गया है, जिसमें छोटे-छोटे फलदार पौधे तैयार किये जाते हैं और यहाँ पैदा होने के बाद दूसरे बगीचों में भेज दिये जाते हैं, जहाँ बड़े-बड़े उद्यान-बगीचे बनकर तैयार होते हैं।

युग-निर्माण परिवार का गठन एक कृषि फार्म के तरीके से हुआ है। कृषि फार्म में छोटे-छोटे प्रयोग गन्ने के, सोयाबीन के, अमुक के, तमुक के किए जाते हैं और उसके जो निष्कर्ष निकलते हैं, वह सब लोगों को मालूम पड़ते हैं और उसी आधार पर वे अपने-अपने कृषि कार्य को आरम्भ करते हैं। व्यक्तित्वों के निर्माण की एक प्रयोगशाला के रूप में, पाठशाला के रूप में, व्यायामशाला के रूप में, नर्सरी के रूप में और कृषि फार्म के रूप में युग-निर्माण परिवार का गठन किया गया है। हम चाहते हैं कि व्यक्ति बदल जाएँ और ऊँचे उठें, क्योंकि हम समाज को ऊँचा उठाना चाहते हैं, समुन्नत बनाना चाहते हैं।

आखिर समाज है क्या? समाज व्यक्तियों का समूह मात्र है। व्यक्ति जैसे होंगे वैसे ही तो समाज बनेगा। समाज कोई अलग चीज नहीं है, वरन् व्यक्तियों के समूह का नाम है। इसलिए व्यक्तियों को श्रेष्ठ बनाने का मतलब है। समय को अच्छा बनाना और समय को अच्छा बनाने का मतलब है। युग के प्रवाह को बदल देना। युग का प्रवाह बदल देना अर्थात् समाज को बदल देना। समाज को बदल लेना अर्थात् व्यक्तियों को बदल देना। यही हमारा उद्देश्य है। इसी क्रियाकलाप के लिए और इसी परिवर्तन के लिए हम लगे हुए हैं और युग-निर्माण का जो नारा लगाते हैं, उसका मतलब ही यह है कि हम युग बदलेंगे, समाज बदलेंगे और व्यक्ति बदलेंगे।

बदलने के लिए हम व्यापक क्षेत्र में प्रयोग नहीं कर सकते। अतः छोटे क्षेत्र में हम प्रयोग करते हैं, ताकि इसकी देखा-देखी इसका अनुकरण करते हुए अन्यत्र भी यही परम्पराएँ चलें, अन्यत्र भी इसी तरीके के क्रियाकलाप चालू किए जा सकें। बाहर की परिस्थितियाँ मन की स्थिति के ऊपर निर्भर हैं। मन जैसा भी हमारा होता है, परिस्थितियाँ अनुरूप बननी शुरू हो जाती हैं। हम इच्छाओं से हमारा मस्तिष्क काम करता है। मस्तिष्क की गणनाओं से शरीर काम करता है। शरीर और मस्तिष्क दोनों ही हमारी अन्तरात्मा की, अन्तःकरण की प्रेरणा से काम करते हैं। इसलिए जरूरत को, आन्तरिक मान्यताओं को, निष्ठाओं को परिवर्तित कर दिया जाए तो जीवन का सारा का सारा ढाँचा ही बदल जाएगा।

मनुष्य के सामने असंख्य समस्याएँ है और उन असंख्य समस्याओं का समाधाान

मनोहरलाल

युग-निर्माण परिवार का गठन एक प्रयोगशाला के रूप में हुआ है। प्रयोगशाला में रासायनिक पदार्थ तैयार किए जाते है और उसके परिणाम को सर्वसाधारण के सामने उपस्थित किया जाता है। युग-निर्माण परिवार का गठन एक पाठशाला के तरीके से हुआ है, जहाँ विद्यार्थी पढ़ाए जाते हैं और पढ़-लिखकर के वे समाज क महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्वों को सँभालते हैं।

केवल इस बात पर टिका हुआ है कि हमारी आन्तरिक स्थिति सही बना दी जाए। दृष्टिकोण हमारा गलत होता है, जो हमारे क्रियाकलाप गलत होता है और गलत क्रियाकलाप के परिणामस्वरूप जो प्रतिक्रियाएँ होती हैं, जो परिणाम सामने आते हैं, वे भयंकर दु:खदाई होते है। कष्टकारक परिस्थितियों के निवारण करने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य का चिन्तन और शिक्षण बदल दिया जाए, परिष्कृत कर दिया जाए। यही हैं हमारे प्रयास, जिसके लिए हम अपनी समस्त शक्ति के साथ लगे हुए हैं।

मनुष्य के आन्तरिक उत्थान, आन्तरिक उत्कर्ष, आत्मिक विकास के लिए करना चाहिए और कैसे करना चाहिए? इसका समाधान करने के लिए हमको चार बातें तलाश करनी पड़ती हैं। इन्हीं चार चीजों के आधार पर हमारी आत्मिक उन्नति टिकी हुई है और वे चार आधार हैं। साधना, स्वाध्याय, संयम, और सेवा। ये चारों ऐसे हैं जिनमें से एक को भी आत्मोत्कर्ष के लिए छोड़ा नहीं जा सकता। इनमें से एक भी ऐसा नहीं है, जिसके बिना हमारे जीवन का उत्थान हो सके। चारों आपस में अविच्छिन्न रूप से जुड़े हुए हैं, जिस तरीके से कई तरह की चौकड़ियाँ आपस में जुड़ी हैं। मसलन बीज एक, जमीन दो, खाद तीन, पानी चार। चारों जब तक नहीं मिलेंगे, कृषि नहीं हो सकती। उसका बढ़ना सम्भव नहीं है। व्यापार के लिए अकेली पूँजी से काम नहीं चल सकता। इसके लिए पूँजी एक, अनुभव दो, वस्तुओं की माँग तीन ग्राहक चार।

इन चारों को आप ढूँढ़ लेंगे तो व्यापार चलेगा और उसमें सफलता मिलेगी। मकान बनना हो तो उसके लिए ईंट, चूना, लोहा, लकड़ी इन चारों चीजों की जरूरत है। चारों में से एक भी चीज अगर कम पड़ेगी तो हमारी इमारत नहीं बन सकती। सफलता प्राप्त करने के लिए मनुष्य का कौशल आवश्यक है, साधन आवश्यक है, सहयोग आवश्यक है और अवसर आवश्यक है। इन चारों चीजों में से एक भी कम पड़ेगी तो समझदार आदमी

भी सफलता नहीं प्राप्त कर सकेगा, सफलता रुकी रह जाएगी। जीवन-निर्वाह के लिए भोजन, विश्राम, मल-विसर्जन और श्रम-उपार्जन, चारों की आवश्यकता होती है। ये चारों क्रियाएँ होंगी तभी हम जिन्दा रहेंगे। यदि इनमें से एक भी चीज कम पड़ जाएगी तो आदमी का जीवित रहना मुश्किल पड़ जाएगा। ठीक इसी प्रकार से आत्मिक जीवन का विकास करने के लिए, आत्मोत्कर्ष के लिए चारों का होना आवश्यक है, अन्यथा व्यक्ति-निर्माण का उद्देश्य पूरा न हो सकेगा।

अब हम चारों चीजों के ऊपर प्रकाश डालते हैं। पहली है। उपासना प्लस साधाना। उपासना और साधना। इन दोनों को मिलाकर पूरी चीज बनती है। उपासना का अर्थ है भगवान् पर विश्वास, भगवान् की समीपता। उपासना माने भगवान् के पास बैठना, नजदीक बैठना। इसका मतलब यह हुआ कि उसकी विशेषताएँ हम अपने जीवन में धारण करें। जैसे आग के पास हम बैठते हैं, तो आग की गर्मी से हमारे कपड़े गरम हो जाते हैं, हाथ गरम हो जाते हैं, शरीर गरम हो जाता है। पास बैठने का यही लाभ होना चाहिए। बर्फ के पास बैठते हैं, ठण्डक में बैठते हैं तो हमारे हाथ ठण्डे हो जाते हैं, कपड़े ठण्डे हो जाते हैं।

पानी में बर्फ डालते हैं तो पानी ठण्डा हो जाता है। ठण्डक के नजदीक जाने से हमें ठण्डक मिलनी चाहिए। गर्मी की समीपता से गर्मी मिलनी चाहिए। सुगन्धित चीजों से सुगन्ध मिलनी चाहिए। चन्दन के समीप उगने वाले पौधो सुगन्धित हो जाते हैं, उसकी समीपता की वजह से। यही समीपता वास्तविक है। उपासना का अर्थ यह है कि भगवान का भजन करें, नाम लें, जप करें, ध्यान करें, पर साथ-साथ हम इस बात के लिए भी कोशिश करें कि हम भगवान के नजदीक आते जाएँ। भगवान हमारे में समाविष्ट होता जाए और हम भगवान में समाविष्ट होते जाएँ अर्थात् दोनों एक हो जाएँ।

एक होने से मतलब यह है कि हम दोनों की इच्छाएँ, दोनों की गतिविधियाँ, दोनों की क्रिया-पद्धति, दोनों के दृष्टिकोण एक जैसे रहें। हमको ईश्वर जैसा बनने का प्रयत्न करना चाहिए। ईश्वर जैसे बनें, न कि ईश्वर पर हुक्म चलाएँ, आपको किसी भी हालत में हमारी माँगे पूरी करनी चाहिए। उपासना का तात्पर्य अपनी मनोभूमि को इस लायक बनाना कि हम भगवान् के आज्ञानुवर्ती बन सकें। उनके संकेतों के इशारे पर अपनी विचारणा और क्रिया-पद्धति को ढाल सकें। उपासना-भजन इसीलिए किया जाता है।

साधना साधना का अर्थ है कि अपने गुण,

कर्म, स्वभाव को साध लेना। वस्तुत: मनुष्य चौरासी लाख योनियों को घूमते-घूमते उन सारे के सारे प्राणियों के कुसंस्कार अपने भीतर जमा करके ले आया है, जो मनुष्य जीवन के लिए आवश्यक नहीं हैं, बल्कि हानिकारक है। तो भी वे स्वभाव के अंग बन गए हैं और हम मनुष्य होते हुए भी पशु-संस्कारों से प्रेरित रहते हैं और पशु-प्रवृत्तियों को बहुधा अपने जीवन में कार्यान्वित करते रहते है। इस अनगढ़पन को ठीक कर लेना, सुगढ़पन का अपने भीतर से विकास कर लेना, सुगढ़पन का अपने भीतर से विकास कर लेना, कुसंस्कारों को जो पिछली योनियों के कारण हमारे भीतर जमे हुए हैं, उनको निरस्त कर देना और अपना स्वभाव इस तरह का बना लेना जिसको हम मानवोचित कह सकें साधना है।

साधना के लिए हमको वही क्रियाकलाप अपनाने पड़ते हैं, जो कि कुसंस्कारी घोड़े व बैल को सुधारने के लिए उसके मालिकों को करने पड़ते हैं। हल में चलने के लिए और गाड़ी में चलने के लिए। कुसंस्कारों को दूर करने के लिए हमको लगभग उसी तरह के प्रयत्न करने पड़ते हैं जैसे कि सरकस के पशुओं को पालते हुए उन्हें इस लायक बनाते हैं कि वे सरकस में तमाशा दिखा सकें। इसी तरह के प्रयत्न हमको अपने गुण, कर्म, स्वभाव के विकास के, परिष्कार के लिए करने पड़ते हैं।

कच्ची धातुओं को जिस तरीके से आग में तपा करके उनको शुद्ध-परिष्कृत बनाया जाता है, जेवर-आभूषण बनाए जाते हैं, उसी तरीके से हमारा कच्चा जीवन, कुसंस्कारी जीवन को ढाल करके ऐसा सभ्य और ऐसा सुसंस्ख्रत बनाया जाए कि हम ढली हुई धातु के आभूषण के तरीके से, औजार-हथियार के तरीके से दिखाई पड़े। जंगली झाड़ियों को काटकर के माली लोग अच्छे-अच्छे झाड़ और खूबसूरत पार्क बना देते हैं। हमको भी अपने झाड़-झंखाड़ जैसे जीवन को परिष्कृत करके, काट-छाँट करके, समुन्नत करके इस लायक बनाना चाहिए कि जिसको कहा जा सके कि वह सभ्य और सुसंस्कृत जीवन है।

दूसरा है स्वाध्याय। मन की मलीनता को धोने के लिए स्वाध्याय अति आवश्यक है। दृष्टिकोण और विचार प्राय: वही जमे रहते हैं हमारे मस्तिष्क में, जो कि बहुत दिनों से पारिवारिक और अपने मित्रों के सान्निध्य में हमने सीखे और जाने। अब हमको श्रेष्ठ पुरुषों का सत्संग करना चाहिए। चारों ओर हम जिस वातावरण से घिरे हुए हैं, वह हमको नीचे की ओर गिराता है।

इसके लिए हमको नित्य ही आत्म-निरीक्षण करना चाहिए। अपनी गलतियों पर गौर करना चाहिए। उनको सुधारने के लिए कमर कसनी चाहिए और अपने आपका निर्माण करने के लिए आगे बढ़ना और जो अपने आपका निर्माण करने के लिए आगे बढ़ना और जो कमियाँ हमारे स्वभाव के अन्दर हैं, उन्हें दूर करने के लिए जुटे रहना चाहिए। आत्म-विकास इसका एक हिस्सा है। हमको अपनी संकीर्णता में सीमित नहीं रहना चाहिए। अपने अहं को और अपनी स्वार्थपरता को, अपने हितों को व्यापक दृष्टि से बाँट देना चाहिए।

दूसरों के दु:ख हमारे दु:ख हों, दूसरों के सुखों में हम सुखी रहें, इस तरह की वृत्तियों का हम विकास कर सकें तो कहा जाएगा कि हमने जीवन-साधना करने के लिए जितना प्रयास किया, उतनी सफलता पाई। साधना से सिद्धि की बात में सन्देह की गुंजाइश नहीं है। अन्य किसी बात में सन्देह की गुंजाइश भी है, देवी-देवताओं की उपासना करने पर हमको फल मिले न मिले, कह नहीं सकते, लेकिन जीवन की साधना करने का परिणाम निश्चित रूप से भौतिक और आध्यात्मिक दोनों ही जीवनों में लाभ के रूप में देखा जा सकता है। यह साधना के बारे में निवेदन किया गया।

दूसरा है स्वाध्याय। मन की मलीनता को धोने के लिए स्वाध्याय अति आवश्यक है। दृष्टिकोण और विचार प्राय: वही जमे रहते हैं हमारे मस्तिष्क में, जो कि बहुत दिनों से पारिवारिक और अपने मित्रों के सान्निध्य में हमने सीखे और जाने। अब हमको श्रेष्ठ पुरुषों का सत्संग करना चाहिए। चारों ओर हम जिस वातावरण से घिरे हुए हैं, वह हमको नीचे की ओर गिराता है। पानी का स्वभाव नीचे गिरने की तरफ होता है। हमारा स्वाभाविक स्वभाव ही ऐसा होता है, जो नीचे स्तर के कामों की तरफ, निकृष्ट उद्देश्य के लिए आसानी से लुढ़क जाता है।

चारों तरफ का वातावरण जिसमें हमारे कुटुम्बी भी शामिल हैं, मित्र भी शामिल हैं, घरवाले भी शामिल हैं, हमेशा इस बात के लिए दबाव डालते हैं, कि हमको किसी भी

प्रकार से किसी भी कीमत पर भौतिक सफलताएँ पा लेनी चाहिए। चाहे उसके लिए नीति बरतनी पड़े अथवा अनीति का आश्रय लेना पड़े। हर जगह से यही शिक्षण हमको मिलता है। सारे वातावरण में इसी तरह की हवा फैली हुई है और यही गन्दगी हमें प्रभावित करती हैं। हमारी गिरावट के लिए काफी वातावरण विद्यमान है। इनका मुकाबला करने के लिए क्या करना चाहिए? श्रेष्ठता के मार्ग पर अगर हमको चलना है, आत्मोत्कर्ष करना है, तो हमारे पास ऐसी शक्ति भी होनी चाहिए जो पतन की ओर घसीट ले जाने वाली इन सत्ताओं का मुकाबला कर सके। इसके लिए एक तरीका है कि हम श्रेष्ठ मनुष्यों के साथ में सम्पर्क और सान्निध्य बनाए रखें, उनके सत्संग को कायम रखें। यह सत्संग कैसे हो सकता है? यह सत्संग केवल पुस्तकों के माध्यम से सम्भव है, क्योंकि विचारशील व्यक्ति हर समय बातचीत करने के लिए मिल नहीं सकते। इनमें से बहुत तो ऐसे होते हैं, जो स्वर्गवासी हो चुके हैं और जो जीवित हैं, वे हमसे इतनी दूर रहते हैं कि उनके पास जाकर के हम उनसे बातचीत करना चाहे तो वह भी कठिन है।

हम जा नहीं सकते और उनके पास जाएँ भी तो क्या उनके लिए भी कठिन है, क्योंकि प्रत्येक महापुरुष समय की कीमत को समझता और व्यस्त रहता है। ऐसी हालत में हम लगातार सत्संग कैसे कर पाएँगे? कभी साल-दो साल में एक-आध घण्टे का सत्संग कर लिया तो क्या उससे हमारा उद्देश्य पूरा हो जाएगा? इसलिए अच्छा तरीका यही है कि हम अपने जीवन में नियमित रूप से जैसे अपने कुटुम्बी और मित्रों से बात करते हैं, श्रेष्ठ महामानवों से, युग के मनीषियों से बातचीत करने के लिए समय निकालें। समय निकालने की इस प्रक्रिया का नाम है स्वाध्याय।

स्वाध्याय को आध्यात्मिक विकास के लिए अत्यधिक आवश्यक माना गया है। स्वाध्याय के बारे में ब्राह्मण-ग्रन्थों में कहा गया है। जिस दिन विचारशील आदमी स्वाध्याय नहीं करता उस दिन उसकी संज्ञा चाण्डाल जैसी हो जाती है। स्वाध्याय का महत्त्व भजन से किसी भी प्रकार से कम नहीं है। भजन का उद्देश्य भी यही है कि हमारे विचारों का परिष्कार हो और हम श्रेष्ठ व्यक्तित्व की ओर आगे बढ़े। स्वाध्याय हमारे लिए आवश्यक है। स्वाध्याय से हम महापुरुषों को अपना मित्र बना सकते हैं और जब भी जरूरत पड़ती है, तब उनसे खुले मन से शरीर को स्वच्छ रखने के लिए स्नान करना आवश्यक है, कपड़े धोना आवश्यक है, उसी प्रकार से स्वाध्याय के द्वारा, श्रेष्ठ विचारों के द्वारा अपने मन के ऊपर जमने वाले कषाय-कल्मषों को, मलीनता को धोना आवश्यक है। स्वाध्याय से हमको प्रेरणा मिलती है, दिशाएँ मिलती हैं, मार्गदर्शन मिलता हैं, श्रेष्ठ पुरुष हमारे सान्निध्य में आते हैं और हमको अपने मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित-प्रोत्साहित करते हैं, मार्गदर्शन करते हैं। ये सारी की सारी आवश्यकताएँ स्वाध्याय और भजन के बराबर ही मूल्य और महत्त्व समझा जाना चाहिए।

❑

दण्डकारण्य

(एक)

जहां राक्षसों ने रचा जन-जन को आतंक।
वहीं राम ने लिख दिये दीप्ति धर्म के अंक॥

(दो)

कृष्णा-तट से विन्ध्य तक, दण्डकवन सुप्रसार।
पूर्व कलिंग, पश्चिम रहा, था विदर्भ-विस्तार॥

(तीन)

दण्ड राक्षसों को मिला, जन-जन हुआ अभीत।
इसीलिए वन का हुआ दण्डक नाम पुनीत॥

(चार)

सभी वनों के मध्य है, दण्डकवन सिर मौर।
कण-कण पर अंकित हुए, राम चरण सबठौर॥

(पांच)

भीषण दनुजातंक को, मिले न कहीं शरण्य।
इसी ग्रन्थ की भूमिका, वना दण्डकारण्य॥

(छः)

जहां राक्षसों ने चखा, राम-सरों का स्वाद।
दण्डक वन के मध्य वह, जनस्थान आवाद॥

(सात)

इतराया जिस दिन मिला, रामवास सौभाग्य।
हरण जानकी का हुआ, दण्डकवन-दुर्भाग्य॥

(आठ)

अंकित कर दी देह पर कर्म-कथा अभिराम।
दण्डक वन प्रियराम को, दण्डक को प्रियराम॥

(नौ)

आधि, व्याधि सन्ताप को मिले न कोई कूल।
पावन दण्डक वन हरे, पीड़ित जन के शूल॥

(दस)

यज्ञ-धूम ले गूंजते रहे जहां ऋत-मंत्र।
उसी दण्डकारण्य में बना राक्षसी तन्त्र॥

(ग्यारह)

यहां हुई शरभंग के, मन की पूरी साध।
यहीं राम ने हत किए दनुज कबन्ध-निपात॥

-डॉ. रामसनेही लाल शर्मा

व्रत त्योहार

ता.	व्रत एवं त्योहार

अक्टूबर- 2017

1. पापांकुशा एकादशी व्रत (सर्वे.), मोहर्रम (ताजिया), भरत मिलाप
3. प्रदोष व्रत
5. पूर्णिमा व्रत, शरद पूर्णिमा, कोजागरी व्रत, मेला शाकुम्भरी देवी (सहारनपुर),कार्तिक स्नान प्रारंभ, बाल्मीकि जयंती
8. करवा चौथ चन्द्रोदय रात्रि 20/21
12. अहोई अष्टमी, राधाकुण्ड स्नान (गोवर्धन)
15. रमा एकादशी व्रत (सर्वे.)
17. प्रदोष व्रत, धनतेरस, धनवंतरि जयंती, यमदीप दान
18. नरक चौदस, मासिक शिवरात्रि, दीपदान
19. देवपितृ कार्य अमावस्या, दीपावली, महाकाली जयंती
20. गुजराती नववर्ष प्रा., गोवर्धन पूजा अन्नकूटोत्सव
21. भाई दौज (यम द्वितीया) यमुना स्नान (मथुरा), विश्वकर्मा पूजा
23. दुर्वा गणपति व्रत, छठ मेला प्रा. (बिहार)
25. सौभाग्य पंचमी, पाण्डव पंचमी
26. सूर्य षष्ठी, छठ पूजा (बिहार व पूर्वी उ.प्र.)
28. गोपाष्टमी
29. अक्षय नवमी, कुष्माण्ड नवमी, जुगल जोड़ी परिक्रमा (मथुरा)
31. देव प्रबोधिनी एका.व्रत (देव उठान एका.) (सर्वे.), तुलसी विवाह, भीष्म पंचक प्रारंभ, तीन वन परिक्रमा, मेला पुष्कर प्रारंभ (राज.), चातुर्मास व्रत पूर्ण, कालीदास जयंती

नवम्बर- 2017

1. प्रदोष व्रत, ता. 2-वैकुण्ठ चौदस
3. पूर्णिमा व्रत
4. कार्तिक पूर्णिमा, गुरु नानक जयंती, कार्तिक स्नान समाप्त
6. सौभाग्य सुन्दरी व्रत
7. चतुर्थी व्रत चन्द्रोदय रात्रि 20/50
9. गुरु तेगबहादुर बलिदान दिवस
10. श्रीकाल भैरवाष्टमी (दर्शन-पूजन), चेहल्लुम (मु.)
14. उत्पत्ति एकादशी व्रत (सर्वे.),बाल दिवस (नेहरू जयंती)
15. प्रदोष व्रत
16. मासिक शिवरात्रि व्रत, वृश्चिक संक्रान्ति
18. देवपितृकार्य अमा., शनिश्चरी अमावस्या
22. विनायक चतुर्थी व्रत
23. बिहारी पंचमी, राम जानकी विवाहोत्सव
24. स्कंद षष्ठी, चम्पा षष्ठी
30. मोक्षदा एकादशी व्रत (सर्वे.), गीता जयंती

सदस्यता फार्म

(यह फार्म भरकर डी.डी./मनी ऑर्डर के साथ भिजवाएं)

हां, मैं 'शाश्वत ज्योति' पत्रिका का सदस्य बनना चाहता/ चाहती हूं।

1 वर्ष 300 रुपये ☐

आजीवन 5000 रुपये ☐

रुपये (शब्दों में) .....

.....

रुपये के लिए 'डिवाईन श्रीराम इण्टरनेशनल चेरीटेबल ट्रस्ट, हरिद्वार (हेतु शाश्वत ज्योति)' के नाम से डी.डी./मनी ऑर्डर नम्बर .....

दिनांक ..... बैंक .....

..... संलग्न है।

नाम .....

पता .....

.....

शहर ..... राज्य .....

पिन कोड ..... फोन .....

फैक्स ..... मोबाइल .....

ई-मेल .....

नोट : एक से अधिक सदस्यता लेने के लिए आप इस फार्म की फोटो कॉपी करवा सकते हैं।

आदर्श आयुर्वेदिक फार्मेसी, कनखल, हरिद्वार (उत्तराखंड)
फोन- 01334-262600, मोबाइल-09897034165
E-mail: Umakantmaharaj@hotmail.com

यहाँ से काटिये